बुनियादी शिक्षा

एक नई कोशिश

अंक–13

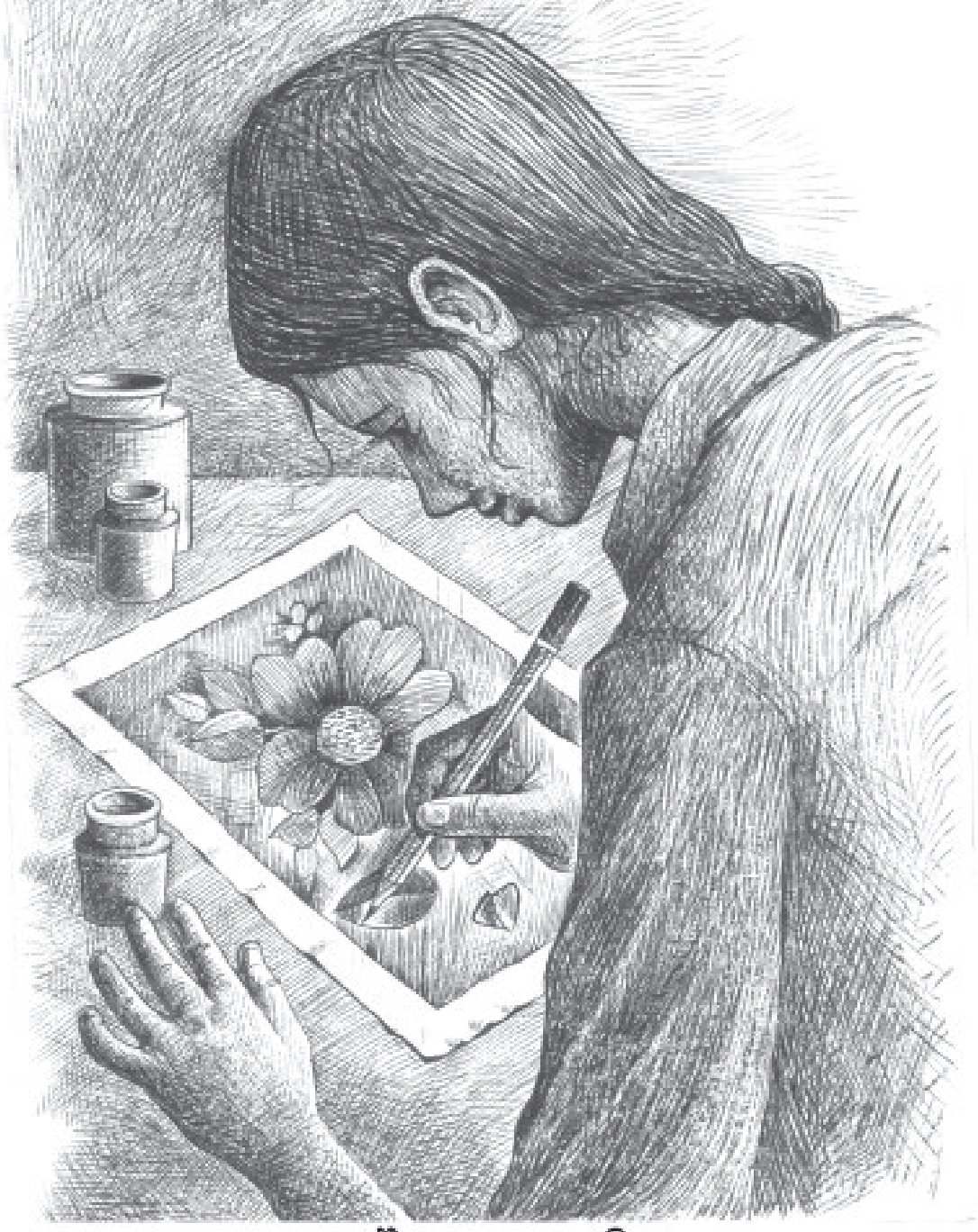

काम और ज्ञान का रिश्ता

बुनियादी शिक्षा: एक नई कोशिश

अंक–13

इस अंक में

सपांदकीय

कड़ियों का सवाल 1

चिट्ठी पत्री

मैं कहता आंखन देखी 2

संदर्भ

कैसे हो काम और ज्ञान की जुगलबंदी 7
के.आर. शर्मा

लीक से हटकर

उद्योग और व्यायाम 11
सोहनलाल पटनी

प्रासंगिकता

आज के संदर्भ में बुनियादी शिक्षा 13
रचना राठौर

हम स्कूलों से क्या चाहते हैं? 16
डब्ल्यू.एस. रसेल

हस्तक्षेप

बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा का व्यवहारिक पहलू 18
दयालचंद सोनी

जीवन

मेरी कैथरीन हाइलमन की कलम से 25
वि.वि. सिंह

शिक्षा और समाज

बुनियादी शिक्षा का लोकव्यापीकरण 29
शंकुतला कुमावत

बुनियाद

चरखे का संदेश 34
भारत डोगरा

परियोजना समीक्षा 41

बुनियादी शिक्षा की समीक्षा से उभरे मुद्दे
भागचंद कुमावत

पुस्तक समीक्षा

बनाने पर एक किताब 46
के.आर. शर्मा

खुद करो और सीखो 48

परामर्श

हृदयकांत दीवान

संपादक

के.आर. शर्मा

सलाहकार

भागचंद्र कुमावत
सुधा भंडारी

चित्रांकन

प्रशांत सोनी

कम्प्यूटर सेटिंग

इसरार अहमद

संपर्क

विद्या भवन बुनियादी शिक्षा संदर्भ केंद्र
रामगिरि, उदयपुर (राज.)
फोनः (0294) 2450806
Email: *vbsudr@yahoo.com*

सौजन्य से : सर रतन टाटा ट्रस्ट, मुंबई

संपादकीय

कड़ियों का सवाल

सामान्य शालाओं में उपयोग किया जाने वाला पाठ्यक्रम शैक्षिक विषयों में विभाजित है। इसमें भावात्मक व व्यवहार के विकास के पहलूओं को या तो कम छुआ जाता है या फिर बिल्कुल ही छोड़ दिया जाता है। एस.यू.पी.डब्ल्यू. आदि के संदर्भ में जो थोड़ा बहुत हाथ से काम करने का मौका मिलता भी है उसका मानवीय श्रम के पहलूओं से कोई जुड़ाव नहीं होता। इस पर विस्तार से व्याख्या करना आवश्यक नहीं है यह बात हम सब जानते हैं।

पाठ्यक्रम को श्रम संबंधित व श्रम आधारित बनाने के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षा के प्रत्येक स्तर पर इस तरह का पाठ्यक्रम संरचित किया जाए जिसमें बच्चे को सभी अवधारणाओं से जूझने का मौका मिले। वह न केवल पढ़ना–लिखना व साधारण/सामान्य गणित करना सीखे या अपने आस–पास के बारे में जाने वरन वह वृहद परिदृष्य को भी समझे और अमूर्त अवधारणाओं से जूझ कर तार्किक चिन्तन द्वारा नया अमूर्त ज्ञान समझ सके व सृजित कर सके।

प्राथमिक स्तर पर व उच्च प्राथमिक स्तर पर आजकल जिन अवधारणाओं को बच्चों के सामने रखा जाता है उनमें से बहुत सी अवधारणाएं सरलता से स्कूल के संदर्भ में श्रम आधारित उत्पादक कार्य के रूप में नहीं विकसित की जा सकती। कम से कम आज के हमारे ज्ञान के दायरे में तो नहीं। बच्चे को पढ़ने–लिखने में दक्ष बनाने का कार्यक्रम श्रम आधारित शिक्षा से कैसे रचित होगा इसके बारे में भी हमारे पास कोई व्यवस्थित प्रस्तुति उपलब्ध नहीं है। इस महते विचार की यथार्थ के साथ कड़ियां जोड़ने में कई पड़ाव बाकी हैं।

हम आगे कैसे बढ़ें?

माध्यमिक स्तर पर तो यह कार्य और भी कठिन है। आज का पाठ्यक्रम व उसके अन्दर निहित धारणाओं को परिवेश के अनुभवों व उसके विश्लेषण के साथ जोड़ना व उत्पादक श्रम के कार्य के माध्यम से विषयों से संबंधित अवधारणाओं तक पहुंचना कठिन प्रतीत होता है। उदाहरणार्थ अर्थशास्त्र जिसके सिद्धान्तों का संबंध श्रम और बाजार से होने की सबसे अधिक गुंजाइश है, उसमें भी बहुत से उदाहरण नहीं मिलते जो अभी लागू पाठ्यक्रम की अवधारणाओं को उत्पादक कार्य व उसके वितरण से जोड़ पाए। अन्य विषयों विज्ञान, गणित आदि में तो स्थिति और भी जटिल है।

इन तीनों स्तरों पर बुनियादी शिक्षा के सिद्धान्तों पर आधारित पाठ्यक्रम विषय–वस्तु व अध्ययन–अध्यापन के तरीकों के बारे में सोचने का क्या रास्ता हो?

क्या तरीका व रणनीति अपनाई जाए जिससे इसमें काम आगे बढ़ सके? आप क्या सोचते हैं? हमें जरूर लिखें। इस अंक पर आपकी टिप्पणी भी अपेक्षित है।

आपके पत्र की प्रतिक्षा में।

चिट्ठी-पत्री

...मैं कहता आंखन देखी

विद्या भवन बुनियादी माध्यमिक विद्यालय रामगिरि में शिक्षा के अवलोकन करने साथी आते रहे हैं। यहां चल रहे उद्योग आधारित शिक्षण को देखकर वे सोचते हैं कि अपनी संस्थान में भी ऐसी शिक्षा लागू करें। विद्या भवन बुनियादी विद्यालय रामगिरि में चलाए जा रहे बुनियादी तालीम को लेकर शिक्षकों, शिक्षाविदों, कार्यकर्त्ताओं और प्रशासकों की क्या राय है प्रस्तुत है आंखों देखी.....

विद्या भवन की बेसिक स्कूल के प्रागंण में आज हम बैठे है। स्व. राजगोपालाचारी जी ने जिस वट वृक्ष का वृक्षारोपण स्व. कस्तूरबा जी की पवित्र स्मृति में यहाँ किया था वह स्थान बड़ा ही प्रेरणादायी है। 'बा' की ममता की छाया अभी भी ताजा यहाँ प्रतीत होती है। 'बा' को मेरा नम्र प्रणाम। हम 'बा' की जीवन प्रणाली को हमेशा याद रखें और भविष्य की यात्रा तय करें यह संदेश विशाल वट वृक्ष हमें देता है।

प्रतिभा पाटिल
राज्यपाल
राजस्थान

काश! मैं फिर विद्यार्थी बन कर यहाँ पढ़ सकूँ। यदि मैं पढ़ पाता तो एक बेहतर इंसान होता। लेकिन दो बातें कहना चाहता हूँ। पहला, 'गतिविधि' को 'काम' बनाना है। दूसरा, गतिविधि अभी 'प्रशिक्षण' के रूप में चलती है, इसे 'शिक्षा' बनाना है। इसके लिए हर काम में से बच्चों के कौतूहल या सवालों के सहारे जो दिशा बनती है उसी दिशा में ज्ञान निर्माण करना है। ऐसी पाठ्यचर्या कैसे बनेगी और ऐसे शिक्षक कैसे बनेंगे? यह चुनौती स्वीकारने पर देश की शिक्षा नई दिशा मिलेगी।

अनिल सद्गोपाल
ई–8/29, सहकार नगर
भोपाल, 462039 (म.प्र.)

विद्यालय की सभी गतिविधियाँ देखी। सभी प्रकार के कार्य अति उत्तम हैं। सभी साथी इस विद्यालय में श्रम को प्रतिस्थापित कर इसके सभी पहलुओं को विकसित करने का प्रयास करते हैं इस प्रकार की संस्था की गतिविधियों का अवलोकन करने में अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव करता हूँ। इसके उच्च माध्यमिक विद्यालय में क्रमोन्नत होने की आशा करता हूँ।

एस.के. जैन
वरिष्ठ जिला शिक्षा अधिकारी
46, मंड़ी की नाल, उदयपुर (राज.)

संस्था का प्रयास सराहनीय है, किन्तु बच्चों को काम सिखाते समय सैद्धान्तिक ज्ञान में पारंगत करते हुए श्रम करवाया जाता तो अधिक अच्छा होता। कुछ बच्चों से प्रश्न करने से पता चला कि उन्हें काम तो आता है, किन्तु सैद्धान्तिक ज्ञान नहीं है। कार्य करवाने वाले शिक्षक अत्यन्त योग्य और कुशल होने चाहिए यथा सम्भव योग्य बढ़ई, योग्य इलेक्ट्रिशियन, योग्य खाद्य प्रसंस्कृत, दर्जी होते तो अधिक अच्छा होता, उन्हें 1 घण्टे के लिए नियुक्त कर लिया जाय, शिक्षक सैद्धान्तिक ज्ञान दें तो छात्रों में आत्मविश्वास एवं ज्ञान दोनों होगा।

सी.बी.एम. त्रिपाठी
3/58,रत्नविहार, भारगांवा गोरखपूर

विद्या भवन बु.मा.वि. का अवलोकन कर अभिभूत हो गया हूँ। माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा के अन्तर्गत हॉबी फार्मेशन के लिये विभिन्न गतिविधियों में छात्र/छात्राओं को सीखने के बहुत अच्छे अवसर उपलब्ध कराए जा रहे है। साधन सुविधाओं की पर्याप्त व्यवस्था है। इन गतिविधियों की प्रबन्धन व व्यवस्था बालकों में आत्मविश्वास, साहचर्य, सहिष्णुता, विश्वसनीयता, कार्य क्षेत्र में रूची के अनुसार कार्य करने में दक्षता आदि का विकास करने के समुचित अवसर प्रदान करने में सक्षम है।

मुरली मोहन शर्मा
प्राचार्य, डाइट डुंगरपुर

विद्यालय के सुन्दर वातावरण एवं स्वच्छता ने बहुत प्रभावित किया। विभिन्न उद्योगों को शिक्षा का आवश्यक अंग बनाया जाना बहुत अच्छी बात है। बालकों में श्रम के प्रति निष्ठा एवं आत्मविश्वास भी देखा गया जो अच्छा है। उद्योग को बेसिक शिक्षा के सिद्धान्त के आधार पर विभिन्न विषयों के सिखाने का कार्य हो सके तो यह एक आदर्श प्रस्तुत कर सकता है। मुझे विश्वास है कि यदि लगातार इस ओर प्रयास किया जाए तो उद्देश्य की प्राप्ति की जा सकती है। मैं संस्था के उज्ज्वल भविष्य के लिए कामना करता हूँ।

गजानंद शर्मा
उप प्राचार्य, डाइट डुंगरपुर

इस विद्यालय की यात्रा कर कक्षा–8 के विद्यार्थी जीवन की यादें ताज़ा हो आयी। जब हम पाँच साथियों ने मिलकर 8 x 4 की क्यारी में आलू बोए थे। तब 1.25 क्वि. आलू पैदा किए थे। हम तकली कातते थे, पौधों की बाढ़ लगाते थे। आप सकारात्मक मूल्यों का विकास कर रहे है। जिसकी आने वाली पीढ़ी को भारी जरूरत रहेगी इससे सामूहिकता का विकास हो रहा है।

प्रकाश आर. आर्य
प्राध्यापक, डाइट, डुंगरपुर

आजादी के पूर्व गांधी ने बुनियादी शिक्षा की जो सैद्धान्तिक कल्पना की थी उसका मूर्त रूप पहली बार इस संस्था में देखने को मिला। स्वावलम्बन एवं सहभागिता का अनूठा प्रयोग देखा। इसके लिए संस्था साधुवाद के पात्र हैं।

प्रवीर कुमार
(टी.जी.टी.) रेल्वे इंटर कॉलेज, गठहरा

वर्तमान संदर्भ में बुनियादी शिक्षा की अवधारणा को सशक्त बनाकर समाज निर्माण के कार्य को बढ़ावा देने का प्रयास काफी अच्छा लगा, शायद और विद्यालयों की बजाय इस विद्यालय के छात्र समाज को काफी प्रभावित करेंगे। ऐसी हमारी आशा है। निरंतर शिक्षा की प्रक्रिया को जीवित देखकर आनंद हुआ।

संपर्क, समाज सेवी संस्था का भ्रमण दल
रायपुरिया, जिला झाबुआ (म.प्र.)

जीवन और शिक्षा का समवाय होना चाहिए। इसका सफल प्रयोग यहाँ देखने को मिला। बहुत खुशी हुई। हमारी तरफ से शुभकामनाएँ।

श्रीमती सुषमा म. पध्या
ग्राम मंगल आइना, तालुका दहानु, जिला थाने
महाराष्ट्र

गांधी जी के सिद्धान्तों पर आधारित व्यवहारिक शिक्षण का प्रयास अच्छा लगा। गांधी के दर्शन को पाठ्यक्रम में सरल रूप में सिद्धान्त के रूप में शिक्षण में शामिल करें तो बच्चे गांधी दर्शन से अधिक परिचित हो सकेंगे।

कप्तान सिंह उजन्ता
जयपुर

सम्पूर्ण संधारित कार्यक्रमों और प्रवृत्तियों को देखकर ऐसा लगा काश! मेरे विद्यालय में भी ऐसा कुछ होता अथवा कर पाऊं। छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के विकास की यथा संभव शिक्षा कार्यक्रमों का आयोजक निःसन्देह सराहनीय है। अतः मैं उज्जवल भविष्य की शुभ कामनाएं करता हूँ।

मोहनलाल नागदा
प्रधानाध्यापक, राजकीय माध्यमिक विद्यालय, सीसारमा

बुनियादी मदरसा रामगिरि मा.वि. को देखने का सुअवसर प्राप्त हुआ। वास्तव में गाँधी जी की भावनाओं से ओत–प्रोत विद्यार्थियों को आत्मनिर्भर बनाने के साथ–साथ व्यवहारिक धरातल पर खरी उतरने वाली तालीम प्रदान करता है। आज की पीढ़ी के लिए यहाँ की तालीम ही सच्ची तालीम है जो विद्यार्थियों को कॉलेज में प्रवेश की होड़ एवं नौकरी की भागदौड़ को छोड़कर स्वयं का रोजगार करने को प्रोत्साहित करेगी। निःसंदेह यह संस्था बधाई की पात्र है, भविष्य में इसी तरह उत्तरोत्तर तरक्की कर उदयपुर जिले ही नहीं अपितु मण्डल को गौरवान्वित करेगी।

डॉ. भंवर लाल नागदा
प्राचार्य, रा.उ.मा.विद्यालय गुडली, (मावली) उदयपुर

मैंने विद्या भवन संस्थान का अवलोकन किया। यहाँ चलने वाली गतिविधियों को देखा व बचपन की याद ताज़ा हो गई। मन में यह भी रही कि काश हम भी इस स्कूल से पढ़ निकलते। खुला, प्राकृतिक रूप से भरपूर इस संस्थान को देखकर मन प्रफुल्लित हुआ। यहां के शिक्षक व कर्मठ कर्मचारी इसके बधाई के पात्र हैं। मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह संस्थान उत्तरोतर तरक्की करे।

मोहम्मद फारूक
C/o एम.एस. स्कूल, कसाइयों की बारी के अंदर
बीकानेर 334005 (राज.)

विद्या भवन संस्थान के अवलोकन ने मुझे झकझोर दिया। संस्थान के शिक्षकों व कर्मचारियों से मिलकर बहुत खुशी हुई। इनके द्वारा किये जा रहे सभी कार्य बहुत ही सराहनीय व उत्कृष्ट है तथा आज के शिक्षण से हटकर विद्यार्थियों को व्यावसायिक प्रशिक्षण दिया जा रहा हैं जिसके फलस्वरूप विद्यार्थी भविष्य में रोजगार से जीवन–यापन कर सकेंगे।

अनिल कुमार प्रजापत S/o श्रीमती चंद्रकला प्रजापत
अभिनव बाल भारती, राजलदेसर (चुरू)

मुझे बहुत अच्छा लगा कि इतना प्यार और अपनत्व हमारा शाला परिवार बच्चे को जिन्दगी सही दिशा में मोड़ना सिखा रहे हैं। मेरी प्रार्थना है कि यह प्रक्रिया सफल हो।

सदानन्द विश्वनाथ
स्पोर्टिंग फ्रन्टियर्स
इन्दिरा नगर, बैंगलौर 560008

गाँधी जी की बेसिक शिक्षा को वास्तविकता प्रदान कर रही है। वास्तव में समाज की यह एक बहुत बड़ी देन है कि ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थियों को विभिन्न प्रशिक्षण देकर एक क्रान्ति लाई जा रही है। आगे निरन्तर विकास हेतु शुभकामनाओं सहित।

प्रो. हेमलता तलेसरा
विभागाध्यक्ष, शिक्षा विभाग
जैन विश्व भारती संस्थान (मान्य विश्वविद्यालय) लाडनू (जिला नागौर)

बुनियादी शिक्षाः एक नई कोशिश का 12वां अंक मिला। धन्यवाद! मैं आपको इस अंक के लिए बधाई देना चाहता हूँ। इसमें जो बुनियादी शिक्षा से सम्बन्धित सामग्री प्रस्तुत की गई है वह बहुत ही उपयोगी है। बुनियादी शिक्षा की अवधारणा एवं इसके क्रियान्वयन में आने वाली कठिनाइयों को बहुत सुन्दर ढंग से लेखकों ने प्रस्तुत किया है। विशेषकर प्रो. कृष्ण कुमार व श्री कमल महेन्द्रू के लेख बहुत अच्छे लगे।

इस अंक की कुछ प्रतियाँ संभाल कर रखनी चाहिए आगे भी इन्हें संदर्भ (Reference) के लिये उपयोग में लिया जा सकता है।

आपकी पत्रिका का गेटअप भी बहुत अच्छा हो गया है इसके लिए आपकी टीम को बधाई।

शुभकामनाओं के साथ,

ए.बी. फाटक
रिटायर्ड प्राचार्य
विद्या भवन उच्च अध्ययन शिक्षण संस्थान
उदयपुर (राज.)

संदर्भ– राष्ट्रीय पाठ्यचर्या–2005

कैसे हो काम और ज्ञान की जुगलबंदी ?

के..आर. शर्मा

एनसीईआरटी के तत्त्वावधान में निर्मित राष्ट्रीय पाठ्यचर्या यानेकि नेशनल करिकुलर फ्रेमवर्क–2005 नामक दस्तावेज शिक्षा की तथाकथित प्रचलित मान्यताओं, मसलन रटंत पद्धति को नकारते हुए उसके हल की पेशकश करता है वहीं यह दस्तावेज कोरे किताबी ज्ञान को भी पर्याप्त नहीं मानता है। यह मसौदा शिक्षा के दायरे में काम और ज्ञान की दुनिया में तालमेल बिठाने की दरकार भी करता है। काम के संदर्भ में आरंभिक स्तर से शुरू करते हुए काम को अधिगम से जोड़ने के लिए कुछ बुनियादी कदम सुझाए गए हैं। उनके पीछे आधार यह है कि ज्ञान काम को अनुभव में बदल देता है और सहयोग, सृजनात्मकता और आत्मनिर्भरता जैसे मूल्यों की उत्पत्ति करता है। काम, ज्ञान और रचनात्मकता के नए रूपों की प्रेरणा भी देता है। इतना ही नहीं, ऊंची कक्षाओं में स्कूल के संसाधनों को औपचारिक मान्यता देने की सिफारिश भी की है ताकि उन बच्चों को लाभ पहुंच सके जो आजीविका से सीधे

जुड़ी हुई शिक्षा का चुनाव करते हैं।

जो बात गांधी ने आजाद भारत के लिए कही थी उसकी सुगंध इस दस्तावेज में आ रही है। यह दस्तावेज स्कूल वातावरण में काम और ज्ञान को जोड़ने की कवायद करता है। दस्तावेज इससे भी कहीं आगे की बात करता है। दस्तावेज में ये संकेत मिलते हैं कि शिक्षा महज डिग्री प्राप्त करने का जरिया बनकर ही न रह जाए बल्कि समाज में जो आंतक और असंतोष गहरा रहा है उसे हल करने में भी अहम भूमिका अदा करे। यही कारण है कि शिक्षा में कला को जगह दिए जाने की सिफारिश करता है। दरअसल ये सब चीज़ें बुनियादी शिक्षा का अहम हिस्सा रही है। यह कहना भी प्रासंगिक होगा कि यह दस्तावेज मातृभाशा में शिक्षण की पैरवी करता है। बहरहाल, सन 2005 के राष्ट्रीय पाठ्यचर्या में बुनियादी तालीम के कुछ–कुछ अंश या कतरों को जगह–जगह पर देखा जा सकता है। इससे एक बात तो साफतौर पर समझ में आती है कि हम जब बेहतर शिक्षा की बात करते हैं तो गांधी की बुनियादी तालीम की बात किए बिना नहीं रहा जा सकता।

गांधी ने जिस बुनियादी तालीम की बात की उसकी नींव हाथों से काम करने पर टिकी हुई है। गांधी ने कहा था कि इस देश में ऐसी शिक्षा व्यवस्था चाहिए जो यहां की परिस्थितियों के अनुकूल हो। इस देश में कोरी किताबी शिक्षा से बात बनने वाली नहीं है। एक तरफ जहां देश को अंग्रेज़ों के चंगुल से आजाद कराने के लिए लामबंदी की जा रही थी वहीं दूर की सोच यह भी थी कि स्वतंत्र भारत में ऐसी शिक्षा व्यवस्था लागू करना चाह रहे थे जिससे कि देश का बच्चा स्वावलंबी बन सके। एक प्रमुख बात जो बुनियादी तालीम में झलकती है वो ये कि स्थानीय परिवेश को ध्यान में रखते हुए शिक्षा का ताना–बाना बुना जाए। हर बच्चे को काम करने के अवसर उपलब्ध कराए जाएं।

आजाद भारत में बुनियादी तालीम को मुख्यधारा की शिक्षा बनाने के बजाए इसको हाशिए पर पटक दिया गया। यह विडंबना की बात है कि स्वंतत्र भारत में बनाई जाती रही नीतियों में काम और ज्ञान को जोड़ने के बजाए ज्ञान को ही सर्वोपरी मान लिया गया। यह विडंबना की बात है कि जो बुनियादी तालीम के विद्यालय मौजूद थे वहां पर भी शिक्षा में उद्योग आध ाारित शिक्षा एक कर्मकांड बनकर रह गई। आज भी देश में बुनियादी तालीम के विद्यालय हैं वहां बुनियादी तालीम को सही मायनों में स्थापित नहीं कर पाए हैं।

काम को लेकर एनसीएफ कहता है कि यह ऐसी गतिविधि है जो कुछ बनाने या करने की ओर इशारा करती है। इसका यह भी मतलब होता है कि धन या किसी ओर चीज़ के बदले किसी ओर के लिए श्रम करना। एनसीएफ ऐसे श्रम की कोई फेहरिस्त तो नहीं बताता लेकिन दैनिक उपयोग की वस्तुओं के उत्पादन और लोगों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की देखरेख से जुड़ी हो इस तरफ इशारा जरूर करता है। अन्य गतिविधियां प्रशासन और व्यवस्थागत हो सकती है। समाज में इन दो बुनियादी कामों भोजन उत्पादन और सुचारू व्यवस्था की स्थापना के अलावा और भी गतिविधियां हैं जिनका संबंध इंसान से होता है। एनसीएफ ऐसे काम को भी स्कूली दायरे में स्थापित करने की सिफारिश करता है।

एनसीएफ मानता है कि काम के माध्यम से सीखना चाहिए फिर चाहे वो काम घर में हो, स्कूल में या समाज में। काम के माध्यम से व्यक्ति समाज में अपना स्थान बना पाता है। काम को भी शैक्षणिक गतिविधि मानकर अंतर्निभरता का ताना–बाना बुना जा सकता है। इसके तहत अनुशासनात्मक ढंग से काम करना शामिल होता है जिससे आत्म–नियंत्रण, मानसिक शक्तियों पर नियंत्रण और भावनाओं को काबू में रखने की क्षमता आती है। काम के दौरान एक तो उस सामग्री से संवाद होता है साथ ही इसमें एक टीम भावना के साथ अन्य साथियों से भी संवाद होता है। यानेकि काम के माध्यम से सामाजिक संबंधों की समझ बढ़ती है। यहां जिस काम की बात की जा रही है उसको अर्थ निर्माण और ज्ञान के सृजन के संदर्भ में देखा जा रहा है।

आमतौर पर हमारे समाज में कारीगरी के कौशलों को किताबी ज्ञान से कमतर करके आंका जाता है। जबकि इन कामों से उत्कृष्टता पाने और आत्मानुशासन सीखने के माध्यम होते हैं। हमारे यहां कई उदाहरण देखे जा सकते हैं जिनमें हाथों से काम करने वालों को उतना सम्मान नहीं मिलता जितना कि डिग्रीधारी को।

एनसीएफ मानता है कि काम को स्कूली पाठ्यचर्या का अभिन्न हिस्सा बनाने की जरूरत है। यह तो सही है कि अकाद्मिक वातावरण में काम के माध्यम से रचनात्मकता को जन्म दिया जा सकता है। लेकिन आखिर कैसे? यह देखा जा रहा है कि स्कूल का शिक्षण किताबी ज्ञान की जकड़न में ही जकड़े रहता है। ऐसे में कक्षा शिक्षण में काम को कैसे स्थापित किया जाए यह एक यक्ष प्रश्न है। एनसीएफ इशारा करता है कि शिक्षा के दायरे में उन सब कामों को लाने की जरूरत है जो कुम्हार, बुनकर, किसान, मजदूर, सफाई करने वाले करते हैं। यानेकि हर तरह के काम को सम्मान दिया जाए।

एनसीएफ यह भी चिंता व्यक्त करता है कि समाजोत्पादक कार्य (एसयूपीडब्लू) शिक्षा विभाग की कागज़ी कार्यवाही बनकर रह गया है। दरअसल आजाद भारत में बुनियादी शिक्षा को दफन करके समाजोत्पादक कार्य के नाम पर समझौता किया गया था। जो शिक्षक और बच्चे दिलचस्पी से इसमें शामिल हो जाए वो इसको औपचारिक शिक्षा से परे समझकर करते रहें। दरअसल स्वतंत्र भारत में काम को शिक्षा व्यवस्था में से हटाया गया और कोरी किताबी पढ़ाई को ही शिक्षा का प्रमुख हिस्सा बनाया गया। यही कारण है कि समाजोत्पादक कार्य को स्कूली परिवेश में पाठ्यक्रम से बाहर रखा गया और शिक्षक तथा छात्र की अपनी मनमर्जी पर छोड़ दिया गया।

एनसीएफ काम को सम्मान दिलाने की कवायद तो करता है लेकिन सवाल इस बात का है कि क्या

ऐसा हकीकत में हो पाएगा? एनसीएफ ऐसे काम की दरकार करता है जो उत्पादन से जुड़ा हो और आजीविका में मददगार बने। लेकिन यह चिंता की

बात है कि काम के माध्यम से कहीं ऐसा न हो कि जो असमानताएं समाज में प्रखर रूप से सामने आती हैं वो स्कूल में भी सामने आएं। काम को लेकर समझ तो यही है कि सब बच्चे और शिक्षक मिलकर काम करें और उन तमाम असमानताओं को नेस्तनाबूत करें। मसलन काम को लेकर हमारे समाज में एक मान्यता बन चुकी है कि एक किसम के लोग ही खेती में काम करेंगे। एक किसम के लोग सफाई का काम करेंगे। यह डर तो है ही कि कहीं ऐसा न हो कि स्कूल में खेती में काम करने वाले किसानों और मजदूरों के बच्चे तो स्कूल में खेती और बागवानी के काम करेंगें। हलवाई का बच्चा खाना बनाने में मदद करेगा। और अफसर के बच्चे कंप्यूटर आधारित शिक्षण प्राप्त करेंगे।

हांलाकि ऐसे कई मसले भी हैं जहां यह दस्तावेज मौन हैं। जैसे कि स्कूल में किस प्रकार के काम प्रारंभ किए जाएं? स्कूलों में उत्पादन आधारित काम प्रारंभ करने हैं तो उसके लिए आर्थिक धन की व्यवस्था कैसे होगी? उस काम को कैसे पाठ्यक्रम से जोड़ा जाएगा? यह भी कहा गया है कि गांव या शहर में जहां भी उद्योग आधारित काम होते हों उनकी पहचान करना और उनके सहारे प्रशिक्षण दिया जा सके। यों आजीविका चलाने वाले कामों को आज के चलते हालातों में प्रारंभ करना टेढ़ी खीर है। दूसरे तरह के काम हो सकते हैं जैसे कि बच्चों को बागवानी के काम, स्कूल की सफाई के काम आदि करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। स्कूल की सफाई आदि के काम तो अभी भी बच्चों को ही करना होता है। यहां तक कि बच्चे ही पानी आदि की व्यवस्था भी करते हैं। दस्तावेज यह चिंता भी व्यक्त करता है कि काम को लेकर शिक्षक और बच्चों में कोई फर्क नहीं होना चाहिए। जो काम बच्चों से करवाने हैं उनमें शिक्षक भी भागीदारी निभाए।

उद्योग और व्यायाम

आराम के नए आयाम

सोहनलाल पटनी

''**है**डमास्टर साहब मेहरबान हैं, दो पीरियड उद्योग के दिए हैं। बस काम कुछ नहीं, लड़के तकली कातते हैं या पी.टी. के लड़कों के साथ खेलते हैं, उद्योग व पी.टी. के घण्टे तो बड़े मजे के हैं साब।'' ये शब्द थे एक उच्च प्राथमिक स्कूल के अध्यापकजी के। गाँव जा रहा था, मोटर में उनसे मुलाकात हो गई थी। बस के रास्ते में स्थित एक पाठशाला के प्रांगण में बिखरे बालकों एवं धूम्रपान करते अध्यापकों को देखकर चर्चा चल पड़ी थी और वे एक ही सांस में सब कुछ कह गये थे। वे अपनी बीड़ी सुलगाने के लिए अपने लाइटर को ठीक करने में लग गये थे और मैं सोचता रहा पाठशालाओं में दिए जा रहे उद्योग एवं व्यायाम शिक्षण के विषय में जिनकी स्थिति बड़ी दयनीय है। उद्योग के रूप में उच्च प्राथमिक स्तर तक अधिकतर कताई–बुनाई या खेतीबाड़ी सिखाई जाती है। कताई–बुनाई की धुरी तकलीरानी की कक्षा प्रथम से अष्टम तक बालक को जीवन जीने की या व्यवसायिक शिक्षा प्रदान करती है। कहीं एकाध स्कूल में बुनना सिखाया जाता है पर केवल नाममात्र को ही। पाठ्यक्रम में उद्योग के लिए पर्याप्त कालांशों की व्यवस्था की गई है क्योंकि हम शिक्षा को जीवन से जोड़ना चाहते हैं पर इस व्यवसायिक शिक्षा के नाम पर बालक कक्षा 1 से 8 तक या तो तकली कातते हैं या फील्ड के कंकर बीनते हैं अथवा पी.टी. के बच्चों के साथ मिलकर खेलते एवं शोरगुल करते रहते हैं क्योंकि इन उच्च प्राथमिक पाठशालाओं में व्यायाम शिक्षा के नाम पर खिलवाड़ हो रहा है। इन पाठशालाओं में उद्योग एवं व्यायाम के शिक्षक प्रशिक्षित नहीं हैं।

यदि व्यायाम का शिक्षक है भी तो वह 15 अगस्त या 26 जनवरी के अवसरों के लिए ही चुने हुए बच्चों को व्यायाम प्रदर्शन के लिए तैयार करते हैं। शेष बच्चे या तो खेलते हैं, इधर–उधर भटकते हैं या गुरूसेवा करते हैं जिसके अन्तर्गत गुरूजी के लिए चाय लाना, बीड़ी लाना या कोई घरेलू काम करना है क्योंकि उद्योग एवं व्यायाम के इन कालांशों में इनके शिक्षक अन्य शिक्षकों के साथ बैठकर

बीड़ी अथवा चाय उद्योग को बढ़ावा देते रहते हैं।

यह तो बात हुई प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक पाठशालाओं की। माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक शालाओं में भी उद्योग शिक्षक एवं व्यायाम शिक्षक पूर्ण रूप से प्रशिक्षित होते हुए भी अपने कालांशों का समुचित उपयोग नहीं करते हैं। उद्योग की पढ़ाई इन शालाओं में कक्षा 6 से प्रारम्भ होती है। प्राथमिक पाठशाला में बालक 5 वर्ष उद्योग पढ़ चुका होता है। पर कक्षा 6 से 10 या 11 तक की इन 5–6 वर्षों की पढ़ाई के बाद भी उद्योग के नाम पर बालक कुछ भी नहीं जानता है न कि उसकी उस विषय में रूचि जागृत हुई मालूम होती है। बोर्ड की परीक्षा में सैद्धान्तिक परीक्षा तो वे रट कर पास कर लेते हैं एवं प्रायोगिक परीक्षा में गुरूजी बेड़ा पार लगा देते हैं। इन 5–6 वर्षों की उद्योग की पढ़ाई के लिए सरकारी कोष के माध्यम से कितने साधन एवं सामान को खरीद लिया जाता है। यही हाल व्यायाम शिक्षा का है। कक्षा 1 से 11 तक व्यायाम शिक्षण प्राप्त विद्यार्थी मानसिक रूप से व्यायाम के प्रति जागरूक नहीं होता है। व्यायाम शिक्षक पाठशाला प्रारम्भ में सामूहिक प्रार्थना करवाते हैं (कहीं–कहीं पर नहीं भी करवाते) पी.टी. के कालांश में बहुत कम व्यायाम शिक्षक पी.टी. करवाते होंगे। बस पी.टी. के नाम पर बालक मैदान में या पाठशाला परिसर में बिखरे रहते हैं या खेलते रहते हैं एवं गुरूजी अपने साथियों के साथ वार्तालाप करते हैं या अखबार पढ़ते हैं। एक–आध प्रधानाध्यापकजी ही इस तरफ थोड़ा ध्यान देते हैं क्योंकि इस शिक्षण की परीक्षा तो होती नहीं यह विडंबना की बात है कि हमने शिक्षण को परीक्षा केन्द्रित ही बनाया है। अपने माध्यमिक शिक्षा के सेवा काल में मैंने यह देखा कि बहुत से व्यायाम शिक्षक तो केवल 5 बजे के बाद चुने हुए विद्यार्थियों को खेल खिलाना ही अपना मुख्य कर्त्तव्य समझते हैं एवं पाठशाला में वे दिन में एक बार दर्शन देकर घर चले जाते हैं। पाठशाला का समयविभाग चक्र में सभी शालाओं में पी.टी. के कालांश दिखाए तो जाते हैं पर वैसा होता होगा बहुत कम स्थानों पर। व्यायाम शिक्षक न तो बालकों के विषय में कोई मासिक स्वास्थ्य विषयक रजिस्टर रखते हैं एवं न कोई छात्र कल्याण कार्यक्रम चलाते हैं। बस संध्या के समय कुछ चुने हुए विद्यार्थियों के साथ खेल खेलते हैं या टूर्नामेंट की तैयारी करवा देते हैं। मज़ा तो तब आता है जब इस 5–6 वर्ष के व्यायाम प्रशिक्षण एवं खेलकूद से कुछ बालक तो बेदाग निकल जाते हैं यानी न वे कभी खेले न पी.टी. की। विकलांगों की बात और है पर सर्वांग छात्र भी यदि एक बार व्यायाम शिक्षक की नज़र में अयोग्य साबित हो जाता है तो वे उसे फिर कभी खेल आदि सिखाने का प्रयत्न नहीं करते हैं। बहुत से व्यायाम शिक्षक तो मैदानों की कमी का रोना रोकर अपने कर्तव्य की इतिश्री केवल दिन भर गप्पें मारकर ही कर देते हैं। पाठशालाओं में इनडोर खेलों का क्या स्थान है एवं वे विकलांगों को भी खिलाए जा सकते हैं– ऐसा उन्होंने कभी नहीं सोचा।

देश की बदलती हुई परिस्थितियों में एवं व्यायाम शिक्षा का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। शिक्षा की आधारशिला के रूप में उद्योग एवं व्यायाम शिक्षा का पुनरूद्धान करने की आज आवश्यकता है। कक्षा 1 से 11 तक के लिए शिक्षा विभाग को इन विषयों का सारणीबद्ध पाठ्यक्रम निर्धारित करना चाहिए तभी मानसिक रूप से सुप्त इन अध्यापकों की तन्द्रा टूटेगी एवं वे राष्ट्र के औद्योगिक एवं सैनिक विकास के लिए पृष्ठभूमि तैयार कर सकेंगे।

विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर द्वारा प्रकाशित बालहित से साभार।

प्रासंगिकता

आज के संदर्भ में बुनियादी शिक्षा

रचना राठौर

गाँधी एक व्यक्ति नहीं वरन् एक संस्था के रूप में स्थापित हैं, वह एक वैश्विक व्यक्ति है, जिनकी प्रेरणा से विश्व के कई देशों में स्वाभिमान एवं स्वतंत्रता के आन्दोलन शुरू हुए। गाँधी ने एक नए विचार का प्रतिपादन किया, जो शाश्वत मूल्यों पर आधारित सर्वकालिक महत्व का है।

गाँधी जी की यह सोच कि व्यक्ति का कल्याण शिक्षा के माध्यम से ही संभव है, आज भी प्रासंगिक है, जैसा कि विदित है कि एक विकसित देश की श्रेणी में आने के लिए किसी भी देश के नागरिकों का शिक्षित होना अनिवार्य शर्त है।

आज़ादी के सत्तावन वर्ष के पश्चात् आज भी भारत चरित्र के संकट से जुझ रहा है, मूल्यों का संकट आज भी यक्ष प्रश्न है, चरम सीमा पर आतंकवाद है

और इन सभी कठिनाइयों का हल मेरी दृष्टि से गाँधीजी की बुनियादी शिक्षा ही है।

जीवन के कुछ मूल्य शाश्वत तथा सर्वकालिक होते हैं, किसी भी सदी में सहिष्णुता भावनाओं का सम्मान, सत्य राष्ट्रभक्ति, ये मूल्य उतने ही प्रासंगिक रहे होंगे, जितने आज है, अपितु आज अधिक प्रासंगिक है।

गाँधी जी ने अपने विचारों में उन सभी आवश्यकताओं को सम्मिलित किया जो भारतीय नागरिकों में समाहित होने पर पुनः भारत को गुलाम न होना पड़े। स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय रहकर उन्होंने गहराई से भारतीय दर्शन का अध्ययन किया एवं सामाजिक–आर्थिक कारकों का विश्लेषण करते हुए एक सार्वकालिक शिक्षा पद्धति का प्रतिपादन किया, गाँधी जी द्वारा प्रस्तुत शिक्षा जिसे बुनियादी शिक्षा के नाम से जाना गया, की विशेषताएं निम्न प्रकार से है

1. निःशुल्क शिक्षा
2. अनिवार्य शिक्षा
3. राष्ट्र के लिये शिक्षा
4. मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा
5. रचनात्मक कार्य द्वारा शिक्षा
6. स्वावलम्बी शिक्षा
7. अहिंसा

(1) वर्तमान संदर्भ में प्रासंगिकता :

गाँधी के अनुसार शिक्षा व्यक्ति की एक प्राकृतिक आवश्यकता है, जिस प्रकार प्रकृति द्वारा हवा प्राप्त करने के व्यक्ति को कोई पैसा खर्च नहीं करना पड़ता। इसी तरह समाज द्वारा शिक्षा भी निःशुल्क उपलब्ध कराई जानी चाहिए। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में जैसा कि हम देख रहे है केन्द्र एवं राज्य सरकारें स्वयं इस बात के लिये प्रयासरत है कि आम नागरिक को निःशुल्क शिक्षा प्रदान की जा सके। राजस्थान के संदर्भ में प्राथमिक स्तर तक निःशुल्क पाठ्यपुस्तकें उपलब्ध करवाना, विद्यालयी शुल्क का प्रावधान समाप्त करना एवं भौतिक सुविधों के लिये बजट प्रावधान प्रत्यक्ष उदाहरण है।

निःशुल्क शिक्षा के माध्यम से लोकतांत्रिक प्रणाली मजबूत होती है एवं व्यक्ति के सर्वांगीण विकास एवं सुरक्षा के लिए, लोकतांत्रिक पद्धति ही एक मात्र उचित तंत्र हैं। पहली बार विद्यालय आने वाली पीढ़ी को निःशुल्क शिक्षा की आवश्यकता होती है। इसके पश्चात् स्वयं शिक्षा के महत्व को समझ लेने है, एवं इतने अधिक प्रयास की आवश्यकता नहीं होती।

(2) अनिवार्य शिक्षा

गाँधी जी की यह सोच थी जो हमें प्रत्यक्ष हो रहा है कि निःशुल्क शिक्षा के प्रावधान के बावजूद हजारों वर्षों से अशिक्षित पीढ़ियाँ बच्चों को आसानी से विद्यालय में नहीं भेजेंगी। इस हेतु उन्होंने अनिवार्य शिक्षा का पक्ष रखा। आज हम देख रहे है कि केन्द्र सरकार को अनिवार्य शिक्षा हेतु कानून अनिवार्य बनाने का दबाव का सामना करना पड़ रहा है व 6 से 14 वर्ष के बालकों हेतु शिक्षा के सार्वजनीकरण को सर्वाधिक महत्व दिया गया है। भारतीय परिस्थितियों के संदर्भ में जब तक एक पीढ़ी पूरी तरह से शिक्षित न हो जाए, अनिवार्य शिक्षा की प्रासंगिकता बनी रहेगी।

(3) राष्ट्र के लिए शिक्षा

वर्तमान शिक्षा शास्त्री इस बात से ज्यादा चिंतित दिखाई दे रहे है कि जितना व्यक्ति अधिक शिक्षित है, उतना ज्यादा आत्मकेन्द्रित है। प्रत्यक्ष रूप से हम भी यह अनुभव कर रहे है। सेना में आज योग्य व्यक्तियों की कमी महसूस की जा रही है एवं सार्वजनिक क्षेत्र में राष्ट्र चिंतन का महत्व तीव्र गति से कम होता जा रहा है। पाठ्यक्रमों

के जरिए बालमन पर ऐसा प्रभाव डाला जाये, जिससे राष्ट्र सर्वोपरि की भावना पैदा हो, आज अधिक प्रासंगिक है।

(4) मातृभाषा

भाषा संप्रेषण का सबसे सशक्त माध्यम है। बालक जिस परिवेश में पल रहा है, उस परिवेश की भाषा उसके लिए सबसे सहज समझने योग्य होती है। किसी भी तथ्य को बालक को अधिगमित करवाना है, तो उसकी स्वयं की मातृभाषा जितने कम समय में एवं प्रभावी ढंग से उसे अधिगमित करवा सकती है, अन्य भाषा के लिए कठिन होगा। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में हम देख रहे हैं कि अंग्रेजी माध्यम में पढ़ने वाले बच्चे विषयवस्तु को समझने के बजाय टूट रहे है, परिणाम स्वरूप सर्जनात्मकता लुप्त होती जा रही है।

(5) रचनात्मक कार्यों द्वारा शिक्षा

गाँधी जी ने सभी पश्चिमी शिक्षाविद्ों की तरह इस बात पर सर्वाधिक ध्यान दिया कि मात्र किताबी ज्ञान के माध्यम से कोई भी शिक्षण स्थायी नहीं हो सकता एवं बालक के व्यवहार में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। कक्षा–कक्ष शिक्षण के बजाय गतिविधियों के माध्यम से, बालक को स्वयं गतिविधि में सम्मिलित करके शिक्षण को अधिक प्रभावी बनाया जा सकता है, क्योंकि स्वयं गतिविधि में संलग्न रहने पर ही बालक की एकाग्रता बनी रहेगी, रचनात्मक के अभाव में मात्र किताबी ज्ञान को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देख रहे हैं। इसके चलते स्नातक एवं स्नातकोत्तर युवा कौशलहीन एवं बेरोजगार की विशाल समस्या हमारे समक्ष है।

(6) स्वावलम्बी शिक्षा

वर्तमान विद्यालयी पाठ्यक्रमों में गतिविधियों का समावेश न्यूनतम हैं, जिसका प्रभाव है कि किताबों को रटकर हम डिग्री हासिल कर रहे हैं, लेकिन दैनिक जीवन के अत्यन्त छोटे–छोटे कार्यों को करने में अक्षम है। गाँधीजी के अनुसार शिक्षा पूरी तरह स्वावलम्बी होनी चाहिए एवं समय का नियोजन इस तरह से हो कि औपचारिक शिक्षण के साथ उत्पादकता आधारित शिक्षण भी हो जो आर्थिक संबल दे सके एवं बालक भावी जीवन में परावलम्बी न होकर स्वावलम्बी बन सकें।

(7) अहिंसा

इस तथ्य से हम सर्वविदित है कि आज की हमारी सबसे बड़ी समस्या या उग्र समस्या–आतंकवाद एवं असहिष्णुता की है। गाँधीजी ने तत्कालिक परिस्थितियों में हिंसा के बारे में यह तर्क देकर विरोध किया था कि यह स्थायी समाधान नहीं है। गाँधीजी की यह मान्यता शाश्वत एवं सार्वकालिक उपादेयता वाली रही है कि हिंसा किसी भी समस्या का अंतिम समाधान नहीं है। शिक्षा के माध्यम से व्यक्ति के दृष्टिकोण को अधिक व्यापक बनाया जा सकता है एवं पाठ्य सहगामी प्रवृत्तियों के माध्यम से शैशवावस्था से ही बालक में सहिष्णुता विकसित की जा सकती है, जो आज के युग में सर्वाधिक प्राथमिक आवश्यकता है।

बुनियादी शिक्षा की उपरोक्त विशेषताओं के आधार पर हम यह दावे के साथ कह सकते हैं कि बुनियादी शिक्षा पूर्व की अपेक्षा आज अधिक प्रासंगिक है। बुनियादी शिक्षा के माध्यम से शिक्षा के मौलिक उद्देश्यों की प्राप्ति अधिक आसान है।

हम स्कूलों से क्या चाहते हैं?

डबल्यू. एफ. रसेल के एक लेख से

माता पिताओं को बहुधा यह कहते हुए सुनते हैं कि उनके बच्चों का व्यवहार अच्छा नहीं हैं, वे पढ़ने–लिखने में मन नहीं लगाते, उनको मामूली हिसाब भी नहीं आता, न कुछ लिखना ही आता है। इधर तो बच्चों को अपर्याप्त उन्नति के कारण वे परेशान दिखाई पड़ते हैं। उधर शिक्षा के बढ़ते हुए खर्च का बोझ उठाना पड़ता है। वे सोचते हैं, जितना बच्चों की शिक्षा पर खर्च करते हैं उसके अनुपात में बच्चा बहुत कम सीखता है। इन बातों से एक प्रश्न सामने आता है और वह यह कि आखिर हम स्कूल से चाहते क्या हैं?

हम बदलते हुए जमाने में रह रहे हैं। स्थितियाँ बदल रही है। साथ–साथ बेकारी भी बढ़ रही है। एक जमाना था जब बच्चों से आर्थिक सहायता मिलती थी पर आज तो काम ढूँढ़ना बड़ा कठिन हो गया है। निठल्ले रहने के कारण युवकों को ऊधम सूझता है और वे निर्माण के बजाय विध्वंस में लगते हैं। शिक्षा की माँग बढ़ रही है। जनता और सरकार यही चाहती है कि प्रत्येक को शिक्षा प्राप्त हो, स्कूल सब के लिए हो।

यदि स्कूल कुछ चुने हुए बच्चों के वास्ते चलाने पड़ते तो शिक्षक, साधन, धन आदि की कम

आवश्यकता होती और किसी विशेष उद्देश्य को लेकर वे चलाए जाते। परंतु जब स्कूल सब के लिए चलाने हैं तो यह प्रश्न विचारणीय होना है कि उनसे किस प्रकार की शिक्षा की आशा हम रखें?

जिन्होंने इस समस्या पर विचार किया हैं वे इस नतीजे पर पहुँचे हैं कि यदि कोई स्कूल नीचे लिखी तीन बातों की पूर्ति करता हैं तो उससे हमें संतोष होना चाहिए–

प्रथम बात यह कि वह बच्चों को जीविकोपार्जन के वास्ते तैयार करें। आखिर प्रत्येक व्यक्ति को अपना निर्वाह तो करना पड़ता है और साथ ही समाज का सहयोगी सदस्य बनकर जीवन चलाना पड़ता है। स्कूल में उच्च कोटि की व्यवसायिक शिक्षा देना तो संभव नहीं परन्तु स्कूल इतना करे कि वह प्रत्येक बच्चे को व्यवसायिक सलाह दे सके और यह बता सके कि अमुक बच्चे की रूचि या झुकाव किस ओर है और उसमें कितनी योग्यता है। स्कूल विद्यार्थी को ऐसी बातें अवश्य सिखाएं जो हर व्यवसाय या कार्य के वास्ते आवश्यक होती हैं जैसे– शुद्ध और सुन्दर लिखना, व्यवहारिक गणित, शिष्टाचार, सहयोगी दृष्टिकोण और अपने भावों को स्पष्ट व सरल भाषा में प्रकट करने की योग्यता।

शिक्षा और व्यवसाय के विशेषज्ञों को कहना है कि विद्यार्थी को स्कूल में ही कार्य का अनुभव मिलना चाहिए और वह भी किसी कार्य में सक्रिय सहयोग द्वारा। इसका यही अर्थ है कि शिक्षा और व्यवसाय साथ–साथ चलने चाहिए। विदेशों–मुख्यता अमेरिका में इस प्रकार के कार्यक्रम चलाने का प्रयत्न किया जा रहा है। किसी व्यवसायिक संस्था के साथ स्कूल का गठबंधन कर दिया जाता है जहाँ बच्चे सक्रिय रूप से व्यवसायिक शिक्षा प्राप्त करते है। और स्कूल में भी व्यवसाय को दृष्टि में रखकर शिक्षा दी जाती है। जब युवक अपने को किसी कार्य के योग्य समझ लेता है तो उसकी अनेक समस्याएँ हल हो जाती हैं। फिर, खर्चीली होने पर भी ऐसी पद्धति क्यों न अपनाई जाए?

स्कूल का दूसरा लक्ष्य होना चाहिए विद्यार्थी को स्वस्थ बनाना। कई बच्चे फौज या ऐसी ही अन्य नौकरियों में इसीलिए नहीं लिए जाते कि उनका स्वास्थ्य अच्छा नहीं होता, उनमें अनेक शारीरिक कमियाँ होती हैं। यदि स्कूल उचित ध्यान दे तो अनेक ऐसी कमियां निर्मूल हो जाए। जो शरीर युद्ध के लिये अनुपयुक्त है वह जीवन संग्राम के लिए कैसे उपर्युक्त हो सकता है? दवा, काम की कमी, आदि के रूप में देश को ऐसे कमजोर लोगों का कितना खर्च उठाना पड़ता है? यदि यही खर्च शुरू में उनके स्वास्थ्य साधन में लगाया जाए तो कितना अच्छा हो।

तीसरी बात जो स्कूल कर सकता है वह है बच्चों में नागरिकता पैदा करना अर्थात् उन्हें समाजोन्मुखी बनाना। स्कूल जीवन में ही बच्चों को अपने पड़ोसी के प्रति अपनी जिम्मेदारी का भान हो जाना चाहिए। भावी नागरिक को मताधिकार प्राप्त होगा। अतः यह आवश्यक है कि उसके मन में मानव समानता का भाव हो। स्कूल, बच्चों के मन में ऐसे ही सुन्दर व उच्च आदर्शों का समावेश करने का प्रयत्न करें और उनको व्यवहार में लाने के अवसर जुटाएं। बच्चों में अपने गाँव को साफ–सुथरा रखने की लगन हो, दूसरों को स्वतंत्रता देकर स्वतंत्रता का मूल्य समझने का मादा हो, और छोटे दलों के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करके वे अपनी समदृष्टि का परिचय दे सकें।

इस कार्यक्रम में शिक्षा विशेष का निषेध नहीं है। शिक्षा विशेष हो या साधारण ये बातें ऐसी हैं जिनको सभी स्कूल अपने पाठ्यक्रम में स्थान दे सकते हैं और यदि इतना हो जाए तो हम समझेंगे कि हमारे स्कूल वह कर रहे हैं जो हम उनसे चाहते हैं।

हस्तक्षेप

बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा का व्यवहारिक पहलू

दयालचन्द सोनी

व्यवहारिक पहलू से विचार किए बिना किसी भी योजना का कार्य नहीं चल सकता। योजना का सैद्धान्तिक पहलू निःसंदेह महत्वपूर्ण हैं यह अनेक पुराने अनुभवों के आधार पर बना होता है और कार्यकर्त्ता को उसके लक्ष्य को देखने की अन्तदृष्टि देता है। परन्तु सिद्धान्त और आदर्श व्यर्थ है यदि उनको मूर्तरूप न दिए जा सके। इसलिए कोई भी योजना हो उसका व्यवहारिक दृष्टि से जांचना तथा उस पर उचित संदेह करना आवश्यक है। वास्तव में कोई योजना तब तक पूर्ण नहीं कहीं जा सकती जब तक उसके प्रकट होने के पूर्व ही उसके व्यवहारिक पहलू पर पूर्णतया विचार न कर लिया जाए। यह गर्व का विषय है कि इस योजना के प्रवर्त्तक इस बात को नहीं भूले।

योजना के सिद्धान्त कैसे भी हों, उनके आदर्शों को समझे बिना उसका व्यवहार शुरू कर देने से इस बात की आशंका रहती है कि कार्य की वास्तविक आत्मा लुप्त हो जाए और योजना का परिणाम अभिष्ट से कुछ भिन्न निकले। जहाँ चिकित्सा के

अवसर पर हमें यह देखना चाहिए कि नुस्खे के लिए कौन–कौन सामग्री चाहिए तथा वह कैसे जुटायी जा सकती है, वहाँ हमें यह भी याद रखना चाहिए कि चिकित्सा का परिणाम अभिष्ट होता है या नहीं।

इस नई शिक्षा का उद्देश्य रूग्ण राष्ट्र की चिकित्सा करना है। दरिद्रता, अज्ञान, अपने उत्तरदायित्व तथा कर्तव्य का विस्मरण तथा परतन्त्रता ये हमारे भीषण रोग हैं। इन्हें दूर करके भारतवर्ष को सबल, सम्पन्न, सभ्य, संस्कृत तथा स्वायत्त समाज बनाने की मूल प्रेरणा से कई अन्य योजनाओं के समान शिक्षा की इस नई योजना का भी जन्म हुआ। हमें इस योजना को जहाँ उसे यथा संभव स्वावलम्बी बनाने का प्रयत्न करता है, वहां हमें इस सारे कार्य में अपनी भावना शुद्ध रख कर इसके मूल्य लक्ष्य पर दृष्टि स्थिर रखनी है।

पहला सिद्धान्त

सर्व–प्रथम तो हमें यह समझना चाहिए कि इस विशाल योजना को मूर्तरूप देना कोई छोटा काम नहीं है। सारे देश के लिए यह एक महान् क्रान्ति और भगीरथ मंसूबा है। जब तक हम इस योजना पर इस दृष्टिकोण से नहीं विचारते और महान् क्रांति के समान उमंग, उत्साह तथा जोर शोर से काम नहीं करते तब तक नई तालीम का उद्देश्य एक स्वप्न मात्र रहेगा। तालीम की यह योजना भारतवर्ष के सात लाख गाँवों के लिए बनी है। इसका क्षेत्र किसी प्रान्त, किसी सम्प्रदाय या किसी वर्ग विशेष तक सीमित नहीं है। यह अत्यन्त आवश्यक है कि इसकी जो भी उपयोजनाएँ बनें या भावी पथ को प्रशस्त करने के हेतु प्रारंभिक प्रयोग आरंभ किये जाए, यह बात सदैव ध्यान में रहे कि इस चीज को हमें अमुक क्षेत्र तक सीमित नहीं रख कर पूर्णतया देशव्यापी बनाना है।

हमें याद रखना चाहिए कि किसी चीज़ को सफलतापूर्वक तेजी के साथ फैलाने का यह अर्थ नहीं है कि कार्य की भूमिका पूरी तरह से तैयार न की जाए, उसके संगठन संयोजक और संचालन को सुव्यवस्थित न किया जाए और अन्धाधुन्ध काम चलने लगे। वस्तुतः बगैर तैयारी के अन्धाधुन्ध दौड़ कर कोई भी मनुष्य अपने मकसद तक पहुंचने में शक्ति और समय की बचत नहीं कर सकता। साधारण बातों में भी आवेश युक्त विचार आते ही कार्य शुरू कर देने की अपेक्षा एक मिनिट ठहर कर उस पर विचार करना तथा आवश्यक तैयारी पर पूरा ध्यान देना प्रायः लाभदायक होता है। फिर बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा के विषय में तो पूरा ध्यान होना चाहिए।

प्रारंभिक तैयारी के विषय में सब से प्रमुख स्थान कार्यकर्त्ता अथवा शिक्षक का है। शिक्षक ही इस नई तालीम की सफलता की सब से कठिन शर्त है। ज्यों–ज्यों इस योजना का प्रसार होता जाएगा त्यों–त्यों शिक्षकों की सेना में वृद्धि की बड़ी आवश्यकता होगी। एक बार चल निकलने के बाद तो शायद इसी शिक्षा से नए कार्यकर्त्ता प्राप्त होने लग जाएंगे परन्तु प्रारंभ में बीहड़ जंगल को काट कर सुगम मार्ग बना सकने वाले शिक्षकों की आवश्यकता सर्वोपरि है। समाज में आज प्रतिष्ठा तथा वेतन की दृष्टि से शिक्षक का स्थान है, वह शहरों में प्रतिभाशाली व्यक्तियों का आकर्षित नहीं करता। ऐसी दशा में शहरों से दूर गांवों के लिए आवश्यक चरित्र तथा योग्यता वाले शिक्षकों को पाना एक बड़ी भारी समस्या है। इस समस्या का हल इस प्रकार किया जा सकता है कि समाज में शिक्षक के मान तथा उसकी आर्थिक स्थिति में सुधार का सफल आन्दोलन किया जाए। अनुभवों और अवकाश प्राप्त कारीगरों, राजमंत्रियों, डॉक्टरों इत्यादि को अपने देश की इस महान् सेवा में

सक्रिय भाग लेने को उकसाया जाए तथा योजना का प्रारंभिक उद्देश्य अच्छे स्थानीय कार्यकर्त्ता उत्पन्न करना रखा जाए। बुनियादी तालीम के सफल प्रयोग के लिए बाहरी व्यक्तियों की अपेक्षा स्थानीय व्यक्ति ही अधिक उपयुक्त होंगे। इस शिक्षा में स्थानीय वातावरण का बुनियादी दखल रहेगा। शिक्षक के संबंध में यही नीति उत्तम रहेगी कि ज्यों–ज्यों कार्यकर्त्ता उपलब्ध हों त्यों–त्यों कार्यक्षेत्र बढ़ाया जाए। पहले जैसा तैसा काम शुरू करने के बाद में उसके लिए कार्यकर्त्ता ढूंढ़ना ठोस नीति नहीं।

बुनियादी शिक्षा का ताल्लुक गांव वालों से है। ग्रामीण जनता शिक्षा के प्रति अत्यन्त उदासीन है। उसने प्रचलित अंग्रेजी शिक्षा की व्यर्थता पहचान ली, उसके राष्ट्रविरोधी प्रभाव को वह जान गई। अयोग्य हाथों में पड़ कर यदि बुनियादी तालीम का गलत चित्र ग्रामीण जनता के सम्मुख उपस्थित हुआ तो दुबारा उनकी सद्भावना को आकर्षित करना कठिन होगा। हमें याद रखना चाहिए कि जहां शिक्षा की सर्व–साधारण के लिए मुक्त बनाना प्रजातंत्र के लिए अत्यंत आवश्यक है वहां उसके लिये अनिवार्यता का नियम केवल अंतिम शस्त्र के रूप में काम आना चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि पहले दिन से ही काम जम कर चले। इस बात की ऐसे प्रयोग में बहाने बाजी नहीं हो तो अच्छा है कि अभी तो काम बस शुरू हुआ है, जमते जमते जमेगा। जो प्रयोग प्रारंभ ही से अपना स्वरूप नहीं पहचानता उसे उसको बाद में पहचानना भी मुश्किल होता है? बालक बालिकाओं की संख्या की दृष्टि से सम्पन्न गांव के निकट, शुद्ध वायु, प्रचुर स्वास्थ्यप्रद जल तथा पर्याप्त उपर्युक्त भूमि वाला स्थान पाठशाला के लिये चुना जाना चाहिए। यदि मकान किराए पर लिया जा रहा है तब तो अधिक चारा नहीं रह जाता। परन्तु यदि नए घर बनाये जाते हैं, तब तो इस बात का पूरा ख्याल रखा जाना चाहिए कि चुने गये उद्योगों, होने वाले विविध शिक्षण, खेल–कूद, छात्रालय, शिक्षकों के घर, इत्यादि दृष्टियों से मदरसे की भावी जरूरतें क्या–क्या होंगी। इसके लिए सामाजिक एवं प्राकृतिक वातावरण के अनुकूल पाठशाला के मूल उद्योग पहले ही निर्धारित कर लेना उत्तम होगा। इमारतों के फर्श और दीवारें कच्ची हों परन्तु छत निश्चित रूप से मजबूत और वर्षा से बचाने वाली हो। बुनियाद मदरसों की इमारतें सादी हो। उनमें सुन्दरता का ख्याल रखा जाना तो आवश्यक है, परन्तु इंजिनीयरिंग के डिज़ाइनिंग और प्लानिंग के चक्कर में इमारत में आवश्यक सुविधाएँ जैसे, टांड, अलमारी, चित्रादि टांगने को लकड़ी की पट्टी, पानी घर, इत्यादि नहीं भुला दी जानी चाहिए। पाठशाला के उद्घाटन के पहले भावी शिक्षक का गांव वालों के साथ सम्पर्क स्थापित करना लाभप्रद है। इस समय शिक्षक गांव के लोगों से मिले जुलें, उपर्युक्त बच्चों की तलाश करें, बीमारी में ग्रामीण जनता की विशेष मदद करें, प्रौढ़ शिक्षण का कार्य करे, और गांव के सामाजिक एवं प्राकृतिक वातावरण का अध्ययन करते हुए शाला के पाठ्यक्रम को भली प्रकार निर्धारित करे। इसी समय उसे मदरसे को पूर्णतया साधन सम्पन्न बना लेने का प्रयत्न करना चाहिए। इस तरह कार्य को शुरू करने में थोड़ा सा विलम्ब होगा परन्तु इसमें कोई संदेह हमें नहीं होना चाहिए कि इससे मदरसे का काम बड़ा आसान हो जाएगा, कई भूलों से वह बच जाएगा, उसकी शक्ति तथा समय और धन की बचत होगी।

शिक्षा प्रचार का तरीका चाय या सिगरेट प्रचार के तरीके से बिल्कुल भिन्न होना चाहिए। प्रारम्भ ही से माता–पिता को समझना चाहिए कि मदरसे में बच्चों को जो कुछ मिलता है वह बहुमूल्य है। इसका पहला और प्रधान उपाय तो यह है कि बच्चों को जो

कुछ मिले वह हो वास्तव में बहुमूल्य। दूसरा उपाय यह है कि शिक्षा को मुफ्त देने का अर्थ न हो कि माता–पिताओं को मदरसे को हमें गरज नहीं, मदरसे को हमारी गरज है। वहां यह अभिप्राय बिलकुल नहीं कि गांव वालों के साथ मदरसे का व्यवहार प्रेमपूर्ण, सविनय समझाने बुझाने का न हो या मदरसे का प्रचार न किए जाए कि बल्कि मदरसा, इनके बिना सफल नहीं होगा। यहां अर्थ दृढ़ता से है कि जिसका नियम और शील से अनिवार्य विरोध नहीं है। जब तक अनिवार्य शिक्षा का नियम नहीं बनता– जिसकी आवश्यकता पड़ना वास्तव में कमजोरी का द्योतक है– तब तक माता–पिताओं से छात्रों को कुछ न कुछ प्रवेश शुल्क अवश्य लिया जाना चाहिए जो उचित समझा जाए तो पूरा पाठ्यक्रम समाप्त करके निकलने वाले छात्र को लौटाया जा सकता है। इसके अलावा हर साल के शुरू में हर छात्र का पूरे वर्ष का पुस्तकों, कागज, स्लेट इत्यादि का पूरा खर्च मदरसे में जमा हो जाना चाहिए। साल के बीच में मदरसा छोड़ने पर इसकी बचत मदरसे में जब्त हो जानी चाहिए। यह थोड़ी सी कठोरता मदरसे से वास्तविक मूल्य की एक निरन्तर जाँच सी रहेगी जिससे हम में से किसी को कभी अघाना नहीं चाहिए।

दूसरा सिद्धान्त

ऊपर कहा गया कि स्कूल खोलने के पूर्व शिक्षक गांव के वातावरण में रह कर पाठ्यक्रम तैयार करे। जाकिर हुसैन कमेटी का पाठ्यक्रम इसमें उसकी पूरी रहनुमाई करेगा। स्कूल खुलने के बाद मातृभाषा में सारी पाठ्य–सामग्री जुटाना शिक्षक की एक बड़ा कठिनाई होगी। प्रारंभिक कक्षाओं के स्वयं शिक्षक द्वारा बनाई गई सामग्री सर्वोत्तम सिद्ध होगी। गणित, भूगोल तथा अन्य वैज्ञानिक विषयों के लिए आगे कि कक्षाओं में मातृभाषा विषयक कठिनाई बढ़ जाएगी। जब बुनियादी तालीम शुरू हो तो एक स्थायी कार्यालय की मुस्तैदी पर बुनियादी तालीम की प्रगति आश्रित होगी। बुनियादी शिक्षा में मातृभाषा का अर्थ उस घरेलू बोली से नहीं जो हर दस बीस मील पर बदल जाती है तथा जिसमें प्रचुर विकसित साहित्य का अभाव है। शुरू–शुरू में घरेलू शब्दों का प्रयोग करना तो पड़ेगा परन्तु शीघ्र ही हमें प्रांत की साहित्यिक भाषा पर आ जाना चाहिए। यदि प्रान्तीय भाषा हिन्दुस्तानी से भिन्न हो तो उसे अलग शिक्षण की व्यवस्था आवश्यक होगी। इसके अतिरिक्त

बच्चों को देवनागरी तथा फारसी दोनों लिपियों को पढ़ने–लिखने का अभ्यास करना होगा।

तीसरा सिद्धान्त

नए शिक्षक के लिए सबसे अधिक कठिन इस शिक्षा के तीसरे सिद्धान्त पर अमल करना है। वास्तव में बुनियादी राष्ट्रीय शिक्षा में यदि कुछ नयापन मूर्तरूप देने के लिये यह आवश्यक है कि बौद्धिक शिक्षण का औद्यौगिक शिक्षण, सामाजिक वातावरण, तथा प्राकृतिक वातावरण के साथ पूरा अनुबंध किया जाए। अब यह बात सर्वमान्य हो चुकी है कि वास्तव में बुनियादी तालीम के प्रवर्तकों ने सात से चौदह वर्ष के बच्चों के लिए तालीम का उद्योग, समाज तथा प्रकृति का आधार देकर उसे बच्चे के जीवन का आधार दे दिया है, जीवन पर केन्द्रित कर दिया है। अनुबंध के इस सर्वप्रधान कौशल को प्राप्त करने के लिये शिक्षक का प्रथम कर्त्तव्य यह है कि वह इस सिद्धान्त की पृष्ठ–भूमि में शिक्षा में जीवन को दिया गया निश्चित महत्व न भूले। अनुबंध का उद्देश्य यह है कि बच्चा जो कुछ सीखे उसका प्रभाव अथवा संस्कार उसके जीवन पर अवश्य पड़े, बच्चा शिक्षा में जिन आदर्शों का अध्ययन कर उनको अपने जीवन में प्रयोग भी करे, उद्योग सामाजिक अवस्था तथा प्राकृतिक वातावरण समय–समय पर बौद्धिक शिक्षण के लिए अनेक मार्ग, अनेक उदाहरण प्रस्तुत करें। सीखने के पूर्व छात्र को सीख की आवश्यकता अनुभव हो, जहां बच्चे को हथियार दिया जाए वहीं जीवन में उसका अनुभव भी, अपनी शिक्षा में बच्चे को पूरी दिलचस्पी रहे तथा बुनियादी शिक्षण के फल–स्वरूप बच्चे की सारी प्रकृति, सारा समाज, सारा जीवन अर्थपूर्ण ज्ञान हो। अनुबंध की शिक्षा को सार्थक तथा सजीव बना सकता है। अनुबंध शिक्षा को केन्द्र के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए, वह तो शिक्षा को स्वाभाविक बनाने के लिए है। ऐसा महत्वपूर्ण सिद्धान्त यदि व्यवहार में कठिन सिद्ध हो तो आश्चर्य क्या है? आज शिक्षा और उद्योग में, शिक्षा और जीवन में जो विच्छेद उत्पन्न हो चुका है वह यदि इसे अनुबंध में अयोग्य सिद्ध करे तो कोई विचित्रता नहीं है। अनुबंध में दक्ष होने के लिए शिक्षक को यह बोध हो जाना चाहिए कि जीवन और शिक्षा टुकड़ों में बंट नहीं सकती। ये दोनों बिलकुल घुली–मिली एक

और अभिन्न वस्तुएँ हैं। शिक्षक को चाहिए कि वह अपने जीवन को मदरसे के उद्योग तथा मदरसे के बच्चों के जीवन के साथ एक करने का प्रयत्न करे तथा नया ज्ञान प्राप्त करते हुए अपने जीवन का भी निरंतर विकास करने में लगा रहे। इस साधना से शिक्षा में अनुबंध स्वतः प्राप्त होने लगेगा। वास्तव में बात ऐसी नहीं कि हमारे पाठों का जीवन में कोई महत्वपूर्ण सम्बन्ध होता न हो। बहुत सी सामग्री जो स्कूलों में पढ़ाई जाती रही है, मानव–जीवन से

अवश्य गहरा संबंध रखती है तथा उद्योग द्वारा ज्यादा जल्दी, और अच्छी तरह पढ़ाई जा सकती है। प्रश्न इस अनुबंध को देखने की शक्ति प्राप्त करने का है जो निरंतर अभ्यास करने से आसानी से प्राप्त होता है।

बुनियादी शिक्षा दो पक्षों में विभाजित है। एक और तो केन्द्रिय विषय हैं जिनमें उद्योग का स्थान मुख्य और बच्चे के समाज और प्राकृतिक वातारण गौण है। हमारी राय है कि इन तीनों के साथ–साथ एक चौथे केन्द्र की भी यदि स्वतन्त्र सत्ता मान ली जाए तो शिक्षक को बड़ी आसानी होगी। बच्चे का व्यक्तिगत जीवन भी स्वतन्त्र रूप से बुनियादी शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केन्द्र होना चाहिए। व्यक्तिगत जीवन में बच्चे का शारीरिक स्वास्थ्य उसका निजी विशेष अभिरूचियां तथा अध्यात्म सम्मिलित है। वैसे तो चारों केन्द्र वास्तव में एक दूसरे से घुले मिले हैं। परन्तु जब विश्लेषण करने लगे तो हमें उसे यथाशक्ति पूर्ण करना चाहिए। तो एक ओर केन्द्रिय विषय है और दूसरी ओर हैं वे अन्य बौद्धिक विषय जो साधारणतया प्रत्येक पाठशाला में पढ़ाए जाते हैं। बुनियादी तालीम अपने अनुबंध के द्वारा सारी शिक्षा की कोई अव्यवस्थित खिचड़ी नहीं बनाना चाहती। वह इन सब बिखरे हुए विभिन्न विषय को जीवन में एक सूत्र में बांध कर अधिक सबल, सरस और वास्तविक बनाना चाहती है। अनुबन्ध के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए हमें दोनों तरफ चलना चाहिए। केन्द्रीय विषयों के शिक्षण के समय हमें सदैव यह सोचना चाहिए कि इस समय दूसरी तरफ की कौन–कौन सी बातें सिखाने का अच्छा अवसर है। शेष विषय के शिक्षण के समय हमें इस बात पर गहराई से विचार करना चाहिए कि इस पाठ का किस केन्द्रीय विषय में समावेश हो सकता है। इसके विरूद्ध यदि हम केवल उद्योग या केन्द्रीय विषयों की ओर से चल दें तो बहुत सी महत्वपूर्ण पाठ्य–सामग्री अछूती रह जाएगी तथा इधर पाठ्य विषयों का शिक्षण उचित रीति श्रृंखलाबद्ध नहीं हो सकेगा, बार–बार वे ही शीर्षक फिर उठ खड़े होंगे और अनुबंध के नाम पर कर्मकांड अधिक होने लगेगा। या यदि हम केवल दूसरे छोर से चलें तो हमारा अनुबन्ध बहुत ऊपर–ऊपर का होगा। वह अनुबन्ध की वास्तविक गहराई तक नहीं पहुँच सकेगा। अनुबन्ध की समस्या नई शिक्षा में इतनी महत्वपूर्ण और कठिन है कि इस विषय का यह अनुच्छेद इससे छोटा नहीं किया जा सका। इस पद्धति के पूर्व केवल मन्सूबी तरीका या प्रोजेक्ट मेथड ने इस चीज़ को एक हद तक किया है। बुनियादी तालीम का अनुबन्ध जरा ज्यादा विशाल है तथा उसमें आज तक की निकली हुई सभी अच्छी शिक्षा पद्धतियों के लाभ उठा सकने की गुंजाइश है।

वास्तव में बुनियादी तालीम का यह दावा कभी नहीं कि इसके पहले शिक्षा–शास्त्रियों ने जो अनुसंधान किए तथा जिन विधानों का प्रतिपादन किया बुनियादी तालीम में उनका कोई स्थान नहीं। इस नई शिक्षा में न सिर्फ तमाम आधुनिक शिक्षा–शास्त्र के ज्ञान के रूप में जानने की गुंजाइश है अपितु इसकी सफलता के लिए उसकी बड़ी आवश्यकता है। यद्यपि तमाम पाश्चात्य और स्वदेशी अच्छाइयों को अपनाने के पूर्व उनको स्थानीय परिस्थिति के अनुकूल बनाना पड़ेगा, फिर भी, स्काउटिंग, छात्र–सभा, पंचायत जल्से, पत्र सम्पादन, सहयोगी दुकान, केम्प, देशाटन, माता–पिता से सम्पर्क, बच्चों के व्यक्तिगत पथ–प्रदर्शन, खेल–कूद, धार्मिक पुस्तकों को अध्ययन या श्रवण तथा इस प्रकार की अन्य लाभप्रद बातें जिनसे मदरसे का वातावरण सहज शिक्षात्मक, सरस, सजीव और गांव वालों के लिए भी कई तरह से लाभप्रद हो सकता है, बुनियादी मदरसों में सुव्यवस्थित ढंग से चलनी चाहिए। वास्तविक बुनियादी तालीम कक्षा के कमरे में नहीं हो सकती। उसे सारी जिदंगी में पकड़ना होगा उपर्युक्त विधान इसी लक्ष्य से प्रस्तुत किए गए हैं। इनके प्रयोग में मदरसे के

वातावरण को विदेशी या शहरी बनाने से तथा अधिक खर्चा बढ़ाने से बचना चाहिए।

चौथा सिद्धान्त

बुनियादी शिक्षा का जन्म स्वावलम्बन का आदर्श लेकर हुआ। परन्तु फिलहाल तो यही देखा जाता है कि पूर्व प्रचलित पाठशाला की स्थापना से बुनियादी मदरसे की स्थापना कहीं अधिक महंगा होता है क्योंकि उसमें उद्योग के तमाम साधन जुटाने का खर्च अधिक होता है। अच्छी तरह साधन जुटाने में हम बुनियादी मदरसों को ग्रामीण कह कर कंजूसी नहीं कर सकते। यदि ऐसा हुआ तो उसमें कार्य को हानि पहुंचेगी। ऐसी दशा में आज कल हर मुंह से पूछा जाने वाला यह प्रश्न वाज़िब है कि बुनियादी तालीम किस हद तक स्वावलम्बी हो सकती है। हमारी राय में शिक्षक का वेतन निकल आने तक का स्वावलम्बन तो बड़ा कठिन है क्योंकि प्रथम तो इस मशीन युग ने हाथ के काम की मज़दूरियां एक दम गिरा दी हैं और दूसरे बीस पच्चीस का पहले सोचा गया शिक्षक का अल्प वेतन दिनों दिन अव्यावहारिक हो रहा है। अपने व्यक्तिगत स्वार्थ में लीन हमारा समाज आज शिक्षक की जो आहुति दे रहा है वह अमानुषिक है और बन्द होनी चाहिए। समाज का इसी में भला है। ऐसी परिस्थिति में बच्चों के उद्योग से शिक्षकों को वेतन निकल आना अत्यन्त कठिन है। परन्तु इसका अर्थ नहीं कि हम स्वावलम्बन का आदर्श त्याग कर जो कुछ प्राप्त हो सकता है उसको भी खो दिया जाए। शिक्षक यदि उद्योग में दक्ष हो, औजार तथा दूसरे साधन यदि उत्तम हों तथा उद्योग के कार्य में वणिक बुद्धि का भी प्रयोग किया जाए तो कोई कारण नहीं रह जाता कि उद्योग से संतोषप्रद आर्थिक लाभ न हो। फिर भी आमदनी के लिहाज से स्थानीय भेद काफी रहा करेगा क्योंकि समाज में पारिश्रमि की दर कार्यकर्त्ता के कौशल तथा दिये गये समय पर निर्धारित नहीं है। ये बड़ी ऊटपटांग हैं। एक आदमी आठ घंटों तक लगातार बहुत महीन और बढ़िया सूत कात कर भी छः आने से ज्यादा नहीं कमा सकता। दूसरा जरा सी देर में मरीज़ को देखकर दो रुपया कमा सकता है। बुनियादी मदरसों को शिक्षक के वेतन की दृष्टि से ही नहीं बच्चों के घरों की दृष्टि से भी स्वावलम्बन का आदर्श सामने रखना चाहिए। बच्चे यदि बहुत पैसा कमा नहीं सकते तो काफी पैसा बचा तो अवश्य सकते हैं। कमा कर स्वावलम्बी होने की अपेक्षा बचा कर स्वावलम्बी होने का आदर्श मदरसे की परिस्थिति में अधिक शिक्षात्मक तथा सुलभ है।

उपसंहार

बुनियादी तालीम के सिद्धान्तों का अलग–अलग व्यवहारिक विवेचन कर देने से ही इसका व्यवहार नहीं हो जाएगा। ये सब बातें महत्वपूर्ण होते हुए भी गौण हैं। मुख्य प्रश्न तो यह है कि आज सरकार अथवा जनता अथवा दोनों किस हद तक इस शिक्षा की आवश्यकता को देखते और महसूस करते हैं, किस हद तक समाज में वे उस परिवर्तन के लिए बेताब हैं जो बुनियादी तालीम द्वारा किया जा सकता है, किस हद तक हम लोग व्यक्तिगत स्वार्थों से ध्यान हटा कर पूरे देश के शब्दों में विचार करते हैं। बुनियादी तालीम का सारा शरीर मुर्दा है, उसकी सारी चेष्टाएं व्यर्थ हैं यदि उसके पीछे देश में परिवर्तन की भावना का चल नहीं है। आज राष्ट्र की जो दशा है उससे बुनियादी तालीम को यह बल प्राप्त होने की ही आशा है।

विद्या भवन सोसायटी द्वारा प्रकाशित बालहित से साभार।

जीवन

मेरी कैथरीन हाइलमन की कलम से

वि.वि. सिंह

मेरी कैथरीन हाइलमन ने विद्या भवन में अपने साढ़े चार वर्षों के अध्यापन काल में गांधीजी के शैक्षणिक काल में गांधी जी के शैक्षणिक प्रयोगों के बारे में काफी पढ़ा। गांधीजी शिक्षा को लिखने, पढ़ने और भूगोल–इतिहास के ज्ञान तक सीमित नहीं मानते थे। उनकी मान्यता थी कि शिक्षा जीवन से अलग कोई चीज़ नहीं है, समूची जीवन पद्धति ही शिक्षा है। सुबह जल्दी उठकर प्रार्थना के बाद बच्चे उनके साथ चक्की चलाकर रोज़ की जरूरत का आटा रोज पीसते, बगीचे और खेतों में काम

करते, भोजन बनाते थे। इसी प्रकार कपड़े धोना, झाड़ू देना, पाखाना–सफाई–ये सब शिक्षा के वैसे ही अविभाज्य अंग थे जितना लिखना–पढ़ना इत्यादि।

राष्ट्रीय आन्दोलन के दरमियान जगह–जगह आश्रम और विद्यापीठों की स्थापना होती रही जो गांधी जी के शिक्षा के तरीके से चलते थे। जिसमें चार घण्टे श्रम और चार घण्टे पढ़ाई चलती थी। यह पद्धति 'शिक्षा के साथ उत्पादन' नहीं ''उत्पादन के द्वारा ही शिक्षण'' रहेगी। सभी विषयों के ज्ञान का समन्वय या तो एक उत्पादक बुनियादी उद्योग के साथ होना चाहिए या सामाजिक और प्राकृतिक वायुमण्डल के साथ। शिक्षा मातृभाषा में होनी चाहिए, स्वावलम्बी होनी चाहिए, यानी प्राथमिक शिक्षा के सात साल के दरमियान तीस बच्चों की कक्षा को औसतन अपने शिक्षक का वेतन कमा लेना चाहिए। गांधी इसे बुनियादी शिक्षा कहते थे।

इसके अनुसार पाठ्यक्रम तैयार करने हेतु जाकिर हुसैन समिति तथा बुनियादी शिक्षा के काम को औपचारिक एवं अनौपचारिक माध्यमों से आगे बढ़ाने के लिए 'हिन्दुस्तानी तालीमी संघ' की स्थापना की गई। सरला बहन इनमें सक्रिय रूप से जुड़ी थीं। उन्होंने बापू के साथ चर्चा की और इस सिलसिले में व्यवहारिक प्रयोग करने की स्वीकृति प्राप्त कर ली। इस काम का प्रधान केन्द्र सेवाग्राम इसलिए रखा गया ताकि हमेशा आसानी से बापू से सलाह और मार्गदर्शन मिल सके।

बुनियादी तालीम में रचनात्मक आंदोलन के सभी पहलू निहित थे। बापू मानते थे कि यह भारत और दुनिया को उनकी अंतिम और सर्वश्रेष्ठ देन है।

सेवाग्राम में गांव की पाठशाला को बुनियादी शाला का रूप दिया गया। यहां काम करते हुए सरला बहन को अनेक अनुभव प्राप्त हुए। स्वास्थ्य में गिरावट के कारण उन्हें सेवाग्राम छोड़कर पहाड़ी इलाके में रहने की सलाह दी गई। उनकी इच्छा लड़कियों के लिए शैक्षणिक आश्रम की स्थापना करने की थी। अगस्त 1946 में 'कस्तूरबा महिला मण्डल, कुमाऊं की स्थापना की गई। यह हिमालय में प्रथम बुनियादी शाला थी। दो–तीन लड़कियों से शुरू शाला में एक दो महीनों में छात्राओं की संख्या छः हो गई।

ईंधन की लकड़ी के लिए जंगल जाना, नाले से पानी भरकर लाना, अनाज साफ करना और इसी तरह के घरेलू काम छात्राओं को दिए जाते थे। दोपहर में वे हिमालय के सामने धूप में बैठकर लिखना–पढ़ना सीखतीं। सरला बहन स्वयं एक छोटा–सा दवाखाना, वाचनालय, पुस्तकालय तथा दफ्तर सम्भालती, खाना बनाती और बच्चों के कपड़े धोती थी। मुन्नी (सहायिका) बर्तन साफ करती थी और नाले से पानी भरकर भी लाती थी। गांव की बहनें चिढ़ाती थीं। 'क्या तुमने हाईस्कूल तक बरतन मलने के लिए पढ़ा है?'

उन्होंने सोचा था कि आसपास के गांवों से दिन में कुछ लड़कियां आ जाया करेंगी; लेकिन जब लोग यह पूछते कि ये क्या साथ लेकर आएं, यानी स्लेट, किताब इत्यादि तो वे उत्तर देती थी 'दरांती और रस्सी।' फल यह होता कि कोई नहीं आता। लेकिन ज्यूं–ज्यूं सम्पर्क बढ़ा संख्या बढ़ने लगी। ऐसा सोचा गया था कि लड़कियां शायद चौथी कक्षा तक आश्रम में रहेंगी फिर शादी के बाद शायद गांव के बीच स्वास्थ्य और सफाई के सिलसिले में कुछ प्रकाश फैलाएंगी। लेकिन चौथी कक्षा तक की पढ़ाई पूरी करने पर भी उनके घर से कोई उन्हें ले जाने के लिए नहीं आया तो यह निश्चय किया गया कि सात साल की पूरी

बुनियादी शाला चलायी जाए। धीरे–धीरे गढ़वाल और टिहरी से भी लड़कियां आने लगीं।

आश्रम में साक–सब्जी तो पैदा कर ली जाती। गौ–पालन से दूध भी काफी हो जाता था। ऊनी बिस्तर और ऊनी वस्त्र में भी वे स्वावलम्बी हो गईं। लड़कियां रोज बारी–बारी जंगल में गायों के साथ जातीं, और ईंधन के लिए लकड़ी और गायों के लिए घास काटकर लाती थीं, पड़ाव से जरूरत का पूरा अनाज ऊपर ढोकर लातीं और गेहूं पिसाने के लिए उसे घाटी की पनचक्की तक ले जाती थीं। उनका बौद्धिक विकास और साधारण ज्ञान दूसरी पाठशालाओं की बड़ी कक्षाओं में पढ़ने वाली लड़कियाँ भी अच्छी थी। वे अपना दैनिक रोजनामचा लिखती थीं और 'सूर्योदय' तथा 'विजय' दो हस्तलिखित मासिक पत्रिकाओं के लिए लेख लिखती थी– इससे उनके लिखने की शैली भी सधती जा रही थी। हर कक्षा की जरूरत पूरी करने लायक पुस्तकालय था। शाला में हिन्दी का शिक्षण डाल्टन योजना के अनुसार चलता था, जिससे उनकी व्यक्तिगत रूचि और शैली का विकास हो सके। गांवों में शिविर और कैम्प फायर आदि करने से आगे आकर सबके सामने बोलने की उनकी हिम्मत बढ़ रही थी। यह पहाड़ के संकुचित सामाजिक वातावरण में पली हुई लड़कियों के लिए आसान बात नहीं थी। हमारा जन्माष्टमी उत्सव बड़ा प्रेरणादायक होता था। डेढ़ महीने पहले से हम सुख सागर में कृष्णलीला पढ़ने लगते थे। इसमें बड़ा आनन्द आता था। क्रिस्मस और बुद्ध जयन्ती की तैयारी में भी वही आनन्द आता था। लेकिन इन उत्सवों को हम आश्रम में ही मनाते थे। गांव के लोगों को सिर्फ अपनी परम्परा के त्यौहारों में दिलचस्पी थी। फिर पन्द्रह दिनों तक गीत और नृत्य की खासी अच्छी तैयारियां चलती रहती थीं।

एक–दो साल तक हम उत्सव अपने खाने के कमरे में मनाते थे। चौका ही हमारा मंच होता था। जब यह छोटा पड़ने लगा तो हमने बुनाई के लिए एक बड़ा हाल बनाया और उत्सव भी उसी में मनाने लगे। कुछ वर्षों के बाद जब यह भी छोटा पड़ने लगा तब हमने चार बड़े शामियाने खरीदें; कभी–कभी दर्शकों की संख्या दो–तीन हजार तक पहुंच जाती थी। गांव की बहिनें आठ–आठ दस–दस मील की दूरी से पैदल चलकर आतीं और पड़ौस के लोग हफ्तों पहले पूछने लगते, क्या इस साल भी हमें जन्माष्टमी की बाल लीला देखने का निमंत्रण मिलेगा?

विज्ञान की शिक्षा व्यवहारिक थी। वह प्रकृति के सम्पर्क तथा प्राकृतिक घटनाओं से जुड़ी होती थी। छुट्टियों में शिक्षिकाएं छात्राओं को अन्य आश्रमों और रचनात्मक संस्थाएं दिखाने के लिए भी ले जाती थीं। साथ ही सांस्कृतिक, ऐतिहासिक या भौगोलिक महत्वपूर्ण स्थानों का भ्रमण भी कराया जाता था। ये अनुभव समाज विज्ञान की शिक्षा की बुनियाद बनते थे; और इसकी पूर्ति रोज अखबार पढ़ने से होती थी।

घर का काम–खाना बनाना, झाड़ू लगाना, पानी भरना, तरकारी काटना, टोलियों में होता था। उन टोलियों में छोटी से लेकर बड़ी तक, चार–चार, पांच–पांच लड़कियां रहती थीं। किसी एक को टोली की जिम्मेदारी सौंप दी जाती थी। टोली की यह 'दीदी' काम का मार्गदर्शन करती थी। वह बच्चियों के विकास और विशेष कठिनाइयों की ओर भी ध्यान देती थी। इससे मनोविज्ञान की शिक्षा की व्यवहारिक बुनियादी पड़ती थी। बच्चियां अपने मंत्रिमण्डल का चुनाव करती थीं और मंत्री विभिन्न विभागों की देखरेख करती थी– मसलन आरोग्य, सफाई, रसोड़ा, कृषि इत्यादि।

गांधीजी और कस्तूरबा की पुण्यतिथि या जयन्ती को मनाने से छात्राओं की सर्वोदय सम्बन्धी वैचारिक बुनियाद स्पष्ट और पक्की होती थी। कक्षा छः से लड़कियां छोटी बच्चियों के काम सम्भालने की कुछ जिम्मेदारियां उठाने लगती थीं – छात्रावास में वे उन्हें सम्भालती थीं और उन्हें पढ़ाती भी थीं। अभिभावक बच्चियों की प्रगति से काफी सन्तुष्ट थे हमें लगा कि हममें खुद उत्तर बुनियादी शिक्षा चलाने की योग्यता नहीं है; इसलिए हमने प्रथम टोली को उत्तर बुनियादी शिक्षा के लिए सेवाग्राम भेजना तय किया।

शैक्षणिक गतिविधियों ने सेवाग्राम को फिर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जीवन का केन्द्र बना दिया। यहां पूर्व बुनियादी से लेकर उत्तर बुनियादी शिक्षा का सम्पूर्ण व्यवहारिक चित्र मिलता था। छोटे बच्चे खिलौने या मांटेसरी साधनों के साथ खेलने के बदले तकली, छोटी झाड़ू और बगीचे के औजारों से काम करते थे। अपने बगीचे और पाखानों को साफ रखते थे। अपने नाश्ते के लिए तरकारी और फल पैदा करते थे तथा अपने कपड़ों के लिए सूत कातते थे। जो छोटे–छोटे थे, छोटी रसोई में नाश्ता तैयार करते और अपने साथियों को परोसते थे, नयी पद्धतियों से लिखना–पढ़ना सीखते थे। शिक्षिकाएं बच्चों के घरों के साथ सम्पर्क रखती थीं और इस प्रकार पूर्व बुनियादी शाला प्रौढ़ शिक्षा को बुनियाद भी पड़ गई थी।

बुनियादी शाला में धीरे–धीरे बच्चों की उत्पादक शक्ति बढ़ती थी। बुनियादी उद्योग कृषि और गोपालन था। सहायक उद्योग में बढ़ईगिरी, लोहारगिरी, तेलघानी और एक छोटी–सी आरोग्य प्रधान बेकरी थी। वे वस्त्र स्वावलम्बन साधते थे; कई प्रकार की बुनाई सीखते थे; ओटाई, धुनाई और कताई करते थे। उत्तर–बुनियादी में विद्यार्थियों को पूरी तरह स्वावलम्बी बनना पड़ता था। उन्हें अपना खाने–पीने का खर्च, जेब खर्च, शाला शुल्क और सफर खर्च कमाना पड़ता था।

शिक्षकों को प्रशिक्षण देने का काम भी चलता था। उसमें विभिन्न प्रान्तों की सरकार और निजी संस्थाएं भी ग्रेजुएट और पोस्टग्रेजुएट शिक्षकों को प्रशिक्षण पाने के लिए भेजती थीं।

विद्यार्थी भारत के कोने–कोने से आते थे; इसलिए वहां भारतीय संस्कृति की बहुत सुन्दर तस्वीर मिलती थी। असम की कलात्मक बुनाई, शान्ति निकेतन का संगीत और नृत्य, दक्षिण की कथाकली और अन्य प्रान्तों के लोकगीत और भजनों का संगम यहां पर मिलता था; लगभग पांच सौ लोगों की जमात, कर्म से भरपूर साथ–साथ उत्तर–दक्षिण, पूर्व और पश्चिम की संस्कृति और भाषाओं का संगम। नये समाज का व्यावहारिक स्वरूप देखने के लिए सिर्फ भारत के कोने–कोने से नहीं, बल्कि सारी दुनिया से गांधीजी के दर्शन और शिक्षा की कल्पना का व्यावहारिक स्वरूप देखने के लिए लोग यहां आते रहते थे।

सरला बहन की आत्मकथा 'व्यवहारिक वेदान्त' से संपादित अंश।

शिक्षा और समाज

बुनियादी शिक्षा का लोकव्यापीकरण : एक कोशिश

शकुन्तला कुमावत

गांधीजी की बुनियादी शिक्षा में हाथ से कार्य का महत्वपूर्ण स्थान है। विद्यार्थी जब श्रम करता है तो वो पूरा तन्मय होकर करता है और उसके मन में एक सृजनात्मक भावना होती है। साथ–साथ कार्य करने से विद्यार्थी सामाजिक बनता है। जब विद्यार्थी हाथ से कार्य करके ज्ञान प्राप्त करता है तो उसका ज्ञान अधिक स्थाई होता है। बालक में आत्मनिर्भरता की भावना का विकास होता है जिससे उसका मनोबल बढ़ता है और उसका व्यक्तित्व अधिक प्रभावशाली बनता है।

विद्या भवन बुनियादी शिक्षा संदर्भ केंद्र, रामगिरि के

मुख्य आयामों में आसपास के विद्यालयों के विद्यार्थियों को भी पुस्तकीय ज्ञान के साथ–साथ हाथ से कार्य करने के मौके उपलब्ध कराना और उनमें स्वरोजगार व स्वावलंबन के कौशल विकसित करने के लिए विभिन्न उद्यमों से जोड़ने के प्रयास करना है।

बुनियादी तालीम की मूल भावनाओं के अनुरूप विद्यालय एवं समुदाय के बीच घनिष्ठ संबंध विकसित करने की दिशा में विद्यार्थियों को समुदाय के साथ विभिन्न कार्यक्रमों (सिलाई केन्द्र, पुस्तकालय, विद्यालय में पुस्तकालय, वृक्षारोपण, साक्षरता एवं शिविर) के माध्यम से जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है।

आसपास के विद्यालय के विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को बुनियादी तालीम का प्रशिक्षण देने हेतु तैयार करना, ग्रीष्मकालीन शिविर में प्रशिक्षण हेतु तैयार करना, गांधीजी के बुनियादी शिक्षा के विचार को अन्य विद्यालयों एवं गांवों में फैलाने की दृष्टि से संदर्भ केन्द्र द्वारा तैयार सामग्री (एक्टीविटी शीट्स, न्यूजलेटर, वर्कशीट्स) आदि की भागीदारी करना है। बुनियादी तालीम की बेहतर समझ बनाने के लिए तथा सरकारी एवं गैर सरकारी स्कूलों के शिक्षकों में कौशल व क्षमता को समृद्ध बनाने के लिए कार्यशालाओं, संगोष्ठियों, सेमीनार व चर्चा बैठकों में भागीदारी का प्रयास किया जा रहा है।

समुदाय एवं अन्य विद्यालयों के साथ भागीदारी बढ़ाने के लिए विद्या भवन बुनियादी माध्यमिक विद्यालय संदर्भ केन्द्र पर दी जा रही उद्यम युक्त शिक्षा का समय–समय पर अवलोकन कराने का अवसर देने के लिए कुछ कार्यक्रम किए जाते रहे हैं। इनमें ग्रीष्मकालीन शिविर प्रमुख हैं।

आस–पास के गांवों के 16 सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालय किसी न किसी रूप से संदर्भ केन्द्र से जुड़े हुए है जो बुनियादी शिक्षा के विचार के प्रति दिलचस्पी ले रहे हैं। इसके साथ ही आस–पास के गांव भी जुड़े है जहां संदर्भ केन्द्र द्वारा कई प्रकार के कार्यक्रम चलाए जा रहे है। इन गांवों का और विद्यालयों का सर्वे किया जा रहा है जहां विद्यालयों में बुनियादी शिक्षा के लिए गुंजाइश है।

– प्रेरणा उ. प्रा. विद्यालय बड़गांव
– हंसावास उ. प्रा. विद्यालय नीमचखेड़ा
– रा. उ. प्रा. विद्यालय सुखदेवी नगर
– हंसावास उ. प्रा. विद्यालय बेदला
– रा. उ. प्रा. विद्यालय चिकलवास
– अल्फा इंगलिश उ. प्रा. विद्यालय बेदला
– रा. प्रा. विद्यालय बड़गांव
– गौतम ज्ञान बाल मंदिर (उ. प्रा. विद्यालय) बेदला
– रा. मा. विद्यालय बड़गांव
– रा. बालिका मा. विद्यालय बड़गांव
– रा. माध्यमिक विद्यालय थूर
– रा. उ. प्रा. विद्यालय लोयरा
– रा. प्रा. विद्यालय थूर
– रा. बा. उ. प्रा. विद्यालय थूर
– न्यू ज्योति विद्यालय कटारा
– रा. मा. विद्यालय देवाली

उपरोक्त विद्यालयों में से प्रथम 6 विद्यालयों में बुनियादी तालीम के तहत जो कार्यक्रम किए जा रहे है वो इस प्रकार है–

- संदर्भ केन्द्र द्वारा तैयार की गई हिन्दी एवं गणित विषय की वर्कशीट सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों में प्राथमिक स्तर के

विद्यार्थियों से ट्राय आउट की गई।

- विद्यालयों में वर्ष भर सिलाई गतिविधि चलाई गई। इसके लिए सिलाई मशीने संदर्भ केन्द्र द्वारा दी गई।
- आठ विद्यालयों में पुस्तकालय चलाए जा रहे हैं।
- विद्यालयों में विद्यार्थियों को इलेक्ट्रिक इक्विपमेन्ट रिपेयरिंग एवं खाद्य प्रसंस्करण का प्रशिक्षण संदर्भ केन्द्र के प्रशिक्षकों द्वारा दिया जा रहा है।
- दो दिवसीय शिविर में सरकारी एवं गैर सरकारी विद्यालयों को जोड़ने का कार्य किया गया। साथ ही ग्राम सभा एवं महिला सभा द्वारा गांव के लोगों को भी जोड़ने का प्रयास भी किया।
- सोलह विद्यालयों को एक्टीविटी शीट्स एवं न्यूज़ लेटर द्वारा संदर्भ केन्द्र पर चल रही बुनियादी शिक्षा के बारे में अवगत कराया गया।
- विद्यालयों में बुनियादी शिक्षा के विचार का फैलाव कार्य किया जा रहा है।
- कुछ विद्यालयों में बागवानी का कार्य प्रारम्भ कराया गया और प्रयास जारी है।
- विद्या भवन के पॉलिटेक्निक कॉलेज एवं कृषि विज्ञान केन्द्र के प्रशिक्षकों की मदद से संदर्भ केन्द्र के आस–पास के विद्यालयों में वार्ताएं करवाई जाने की व्यवस्था की है।
- बुनियादी तालीम से संबंधित कार्य गोष्ठियों व सेमीनार में अन्य विद्यालय के शिक्षकों द्वारा भागीदारी का प्रयास किया जा रहा है।
- संदर्भ केन्द्र द्वारा प्रकाशित न्यूज लेटर में अन्य विद्यालयों के अध्यापकों से विचार आमंत्रित कर उन्हें स्थान दिलाने का प्रयास।
- बुनियादी तालीम पर विशेषज्ञों द्वारा समय–समय पर वार्ताएं प्रस्तुत कराना।
- संदर्भ केन्द्र के आस–पास के विद्यालयों के विद्यार्थियों को विद्या भवन कृषि विज्ञान केन्द्र पर प्रशिक्षकों द्वारा विभिन्न प्रकार के कृषि (बागवानी, गुट्टी तैयार करने की विधि, कलम तैयार करने की विधि, नर्सरी तैयार करना एवं कम्पोस्ट खाद तैयार करने की विधि) का प्रशिक्षण दिलाने की व्यवस्था की गई है।
- अन्य विद्यालयों में नियोजित सेवा के कुछ कार्य कराने की बातचीत की गई जैसे विद्यालय परिसर व कक्षाओं को साफ सुथरा रखना, साज सजावट करना परिसर में गाजर घास हटाने का कार्य, गांव में वृक्षारोपण कार्य और श्रम कार्य स्वयं का कार्य स्वयं करना आदि।
- गांवों में सिलाई केन्द्र संचालित कर गांव की महिलाओं को जोड़ा गया और वर्तमान में यह सिलाई केन्द्र कटारा गांव में चलाया जा रहा है। इसके तहत रिलायन्स क्लब की तरफ से सिलाई मशीनें भेंट की गई।
- गांवों में निरक्षर महिलाओं को साक्षर करने का कार्य किया गया। जिसके तहत 24 महिलाओं को साक्षर करने का कार्य हंसावास की अध्यापिकाओं की मदद से किया गया।
- गांवों में विद्यार्थियों के साथ मिलकर पशु चिकित्सा शिविर आयोजित किए गए। महिला चिकित्सा शिविर आयोजित किए गए।

- पुराने विद्यार्थियों (नवयुवक मण्डलों) के साथ टीकाकरण, जल समस्या, पर्यावरण संरक्षण घरेलु दुर्घटनाओं से स्वास्थ्य व स्वच्छता के प्रति चेतना रैली, ईंधन की बचत, नशा निवारण तथा बैंक की कार्य प्रणाली, जड़ी–बुटियों से स्वास्थ्य रक्षा, एवं गांव की अन्य समस्याओं पर बातचीत और समाधान करने का प्रयास किया जा रहा है।

- गांधी जयन्ती पर गांव वालों के साथ श्रमदान करना जिससे श्रम की उपयोगिता समझ सके। समुदाय के साथ जुड़ाव विशेषतौर से महिलाओं की विद्यालय के प्रति भागीदारी बढ़ाने एवं आवश्यकता होने पर इस हुनर को आजीविका के रूप में भी इस्तेमाल करने की दृष्टि से Feeding village में संदर्भ केन्द्र द्वारा सिलाई केन्द्र के माध्यम से परस्पर संबंध प्रगाढ़ किए जाने के प्रयास किए जा रहे हैं।

- सन् 2001 से अब तक आठ सिलाई केन्द्र स्थापित किए जा चुके हैं। सर्वप्रथम लोयरा गांव में सिलाई केन्द्र आयोजित किया गया जिसमें चौदह महिलाओं ने सिलाई कार्य सीखा। इनमें से 2 महिलाएं सिलाई सिखाने का कार्य करते हुए अपनी आजीविका चला रही है। चार महिलाएं अपने घरों में ही परिवार के कपड़े तैयार करके घर में आर्थिक सहयोग दे रही है। अन्य महिलाएं अपना छोटा मोटा कार्य करती है।

- एक सिलाई केन्द्र चिकलवास गांव में स्थापित किया गया। इस गांव में महिलाओं की संख्या अधिक होने एवं महिलाओं की मांग के अनुसार दो बार सिलाई केन्द्र अलग–अलग मोहल्लों में आयोजित किया गया और 23 महिलाओं को प्रशिक्षित किया गया। इनमें से 19 महिलाएं अपने घरों में सिलाई का कार्य कर रही है और अपना कार्य चला रही है। एक महिला नेहरू युवा केन्द्र पर सिलाई सिखाने का कार्य कर अपना गुजारा चला रही है।

- 2003 में रामगिरि गांव में सिलाई केन्द्र आयोजित कर लगभग 18 महिलाओं ने प्रशिक्षण प्राप्त किया। रामगिरि गांव में भी दो स्थानों (2 मोहल्लों) पर सिलाई आयोजित किया गया क्योंकि इसमें भी महिलाओं की संख्या अधिक थी। ये सभी महिलाएं अपने परिवार वालों के कपड़े तैयार कर आर्थिक मदद कर रही है।

- सन् 2005 में पालड़ी गांव की संदर्भ केन्द्र के साथ सिलाई केन्द्र आयोजित किया जिसके तहत 9 महिलाओं ने प्रशिक्षण लिया। इनमें से अभी 6 महिलाएं सिलाई कार्य कर अपना काम चला रही है।

- 2006 में नीमचखेड़ा गांव की 21 महिलाओं को सिलाई का प्रशिक्षण दिया गया है। दो महिलाएं सिलाई सिखाने का कार्य कर रही है और कुछ महिलाएं घर पर ही अपना छोटा मोटा काम निकाल लेती है। इस गांव में सिलाई केन्द्र की अवधि आगे बढ़ाए जाने की मांग पर दुबारा केन्द्र चलाने की योजना है।

- वर्तमान समय में कटारा गांव में संदर्भ केन्द्र द्वारा सिलाई केन्द्र चलाया जा रहा है। इसमें 19 महिलाएं प्रशिक्षण प्राप्त कर रही है। इस प्रकार से आगे से गांवों में सिलाई केन्द्र लगाने की मांग आती रहती है।

- पिछले दो वर्षो से सिलाई केन्द्र के साथ–साथ पुस्तकालय भी संचालित किए जा रहे हैं जो महिलाएं साक्षर हैं वे पुस्तकें भी अपने घरों पर ले जाती है। सिलाई के साथ–साथ पुस्तकें पढ़ने में भी महिलाओं की दिलचस्पी देखने को मिली है। इस प्रकार अब तक लगभग 150–200 महिलाएं विद्या भवन बुनियादी माध्यमिक विद्यालय रामगिरि से जुड़ गई है।

देखने में आया है कि इन महिलाओं में आत्मविश्वास जागृत हुआ है। वे कहती हैं कि आवश्यकता पड़ने पर हम भी सिलाई सिखाने का कार्य कर सकती है। उन्हें एक साथ मिलने जुलने का भी अवसर प्राप्त हुआ है। परस्पर मिलकर बातचीत द्वारा छोटी–मोटी समस्याओं का समाधान करने का एक मंच उन्हें मिला हैं। उन महिलाओं को देखकर अन्य महिलाओं में भी उत्साह देखने को मिलता है।

संदर्भ केन्द्र से गांवों का जुड़ाव पिछले 8–9 वर्षों से आसपास के गांवों में केम्प आयोजित किए जा रहे है। प्रारम्भ में हमारे विद्यालय के विद्यार्थियों एवं अध्यापकों की ही भागीदारी होती थी परन्तु पिछले दो वर्षों से हम जिस गांव में कैम्प लगाते है उस गांव के विद्यालयों के विद्यार्थियों एवं अध्यापकों को जोड़ने का प्रयास कर रहे है।

जिस गांव में शिविर लगाया जाता है उसी गांव का सर्वे प्रश्नावली भरवाकर कराया जाता है इस काम में छात्रों के साथ अध्यापक भी साथ में रहते हैं। फिर विश्लेषण कर परिणाम तैयार किया जाता है। विद्यालय में विभिन्न उद्योगों में तैयार सामग्री जैसे तैयार किए गए कपड़े, लकड़ी का सामान खाद्य प्रसंस्करण कार्यशाला में तैयार सामग्री और हस्त निर्मित पेपर से तैयार उत्पाद की प्रदर्शनी लगाई जाती है। साथ ही विद्या भवन कृषि विज्ञान केन्द्र के उत्पाद एवं विद्या भवन पॉलिटेक्निक द्वारा भी प्रदर्शनी लगाई जाती है। महिला सभा का आयोजित किया जाता हैं जिसमें विद्या भवन पॉलिटेक्निक के प्रशिक्षकों द्वारा सर्फ, साबुन, मोमबती एवं लिक्विड तैयार कराना सिखाया जाता है। विद्या भवन रामगिरि संदर्भ केन्द्र द्वारा खाद्य प्रसंस्करण की विभिन्न सामग्री तैयार करने का प्रशिक्षण दिया जाता है। साथ ही डॉक्टर द्वारा महिला संबंधी विभिन्न रोगों के बारे में जानकारी एवं उसके बचाव पर वार्ता और दवाई वितरण का कार्य किया जाता है।

गांव में श्रम कार्य एवं वृक्षारोपण का कार्य भी किया जाता है। सांयकाल ग्राम सभा का आयोजन किया जाता है इसमें विशेषज्ञों द्वारा वार्ताओं द्वारा स्लाइड्स द्वारा एवं अन्य प्रयोगों द्वारा नशा निवारण, पारम्परिक पद्धति से चिकित्सा, हर्बल गार्डन तैयार करने की विधि वैज्ञानिक चमत्कार, बैंक की बचत एवं सुरक्षा तथा बरसाती पानी के रखरखाव और कार्य प्रणाली पर या कर्ज प्राप्त करने के तरीकों, गैस की जड़ी–बूटी संरक्षण के बारे में जानकारी दी जाती है।

इसी श्रृंखला में अक्टूबर 2006 को बुनियादी शिक्षा केंद्र रामगिरि संदर्भ केन्द्र द्वारा हंसावास उ. प्रा. विद्यालय बेदला के प्रांगण में शिविर का आयोजन किया जा रहा है। इसमें संदर्भ केन्द्र के 8वीं कक्षा के विद्यार्थियों के अतिरिक्त बेदला गांव के 5 विद्यालयों– हंसावास उ. प्रा. विद्यालय, महिर्षि गौतम ज्ञान बाल मंदिर, अल्फा इंग्लिश स्कूल तथा रा. उ. प्रा. विद्यालय सुखदेवी नगर और रा. बा. मा. विद्यालय बेदला के विद्यार्थी भाग ले रहे है। विद्यार्थियों की संख्या 150 के लगभग है ये विद्यार्थी शिविर के सभी कार्यक्रमों में भाग ले रहे हैं।

बुनियाद

चरखे का संदेश

भारत डोगरा

ब्रिटिश राज़ से पहले हमारे देश के दस्तकार दूर–दूर तक अपने हुनर के लिए प्रसिद्ध थे। खास तौर पर हमारे बुनकरों के कार्य को बहुत सराहा जाता था। ढाका की मलमल तो दुनिया भर में विख्यात थी। हमारे अधिकतर गांवों में कपास की खेती होती थी। कपास की देशी किस्में उस ज़मीन पर पैदा हो जाती थी जो कम उपजाऊ हो व अनाज के लिए बहुत अच्छी न मानी जाए। इस तरह अनाज का उत्पादन कम किए बिना कपास मिल जाती थी।

साथ ही घर–घर में चरखा चलता था। किसान परिवारों को खेती से जो खाली समय मिलता था उसमें वे कताई कर सूत बना सकते थे। कोई बाहर जाकर मेहनत करने में असमर्थ हो, वह भी चरखे से सूत कात सकता था। चरखा ऐसा साधारण था कि गांव के बढ़ई बना लें या घर में कोई भी बना ले। तकली तो चरखे से भी साधारण है। ये ऐसे औजार थे जो कहीं भी बन सकते थे, कोई भी उपयोग कर सकता था। जो तरह–तरह की कपास की देसी किस्में उपलब्ध थीं, उन्हें इन चरखों पर काता जा सकता था। कपास को पूनी का रूप देने के लिए धुनिया भी गांव–गांव में मौजूद थे।

इसी तरह सब गांवों में जुलाहे भी मौजूद थे। इन्हें अपनी जरूरत का कच्चा माल गांव में ही चरखे पर काते गए सूत के रूप में मिल जाता था। कुछ शहरों में बहुत विशेष कुशलता वाले बुनकर भी थे, जो दूर–दूर तक मशहूर थे। किन्तु इस दस्तकारी का आधार तो गांवों या कस्बों के बुनकर थे, जो साधारण लोगों की कपड़े संबंधी

जरूरतों को पूरा किया करते थे।

इस तरह हमारे देश के गांव व कस्बे कपड़े के मामले में आत्मनिर्भर थे। वे अपनी जरूरत के कपड़े का उत्पादन स्वयं कर लेते थे। साथ ही इस उत्पादन का तौर–तरीका ऐसा था कि इस में गांव–कस्बे के बहुत से लोगों को रोजगार मिलता था। हाथ से रंगाई और छपाई का भी बहुत हुनर और रोज़गार था। बहुत से पेड़–पौधे और वनस्पति हमारे गांवों में थे जिनसे तरह–तरह के प्राकृतिक रंग प्राप्त किए जाते थे।

अंग्रेज़ी राज की स्थापना होने के बाद विदेशी हुकूमत का एक मुख्य उद्देश्य था कि कपड़े के मामले में इस आत्मनिर्भरता को तोड़ दिया जाए ताकि उनकी कम्पनियों का कपड़ा यहां बड़े पैमाने पर बिक सके। इसी कारण उन्होंने अनेक दस्तकारों को भी नुकसान पहुंचाया।

भारतीय दस्तकारों, विशेषकर बुनकरों को मजबूर किया गया कि वे अपना माल सस्ते दाम पर अंग्रेजों की ईस्ट इंडिया कम्पनी को बेंचे। भारत में लगाए गए करों से प्राप्त आय से ही इस कम्पनी ने भारतीय दस्तकारों का माल बहुत सस्ते में खरीदना आरम्भ कर दिया। दस्तकारों को मज़बूर किया गया कि वे भारतीय कारखानों के लिए काम न करें। उन्होंने अपना काम करना चाहा तो उन्हें कच्चा माल नहीं दिया गया या बहुत महंगा दिया गया। उनके तैयार माल पर विदेश में ही नहीं, देश में भी तरह–तरह के शुल्क लगाए गए। दूसरी ओर, ब्रिटेन से मशीनों द्वारा तैयार माल भारत में बड़े पैमाने पर आने के लिए शुल्क हटा दिए गए या बहुत कम कर दिए गए। इस तरह दस्तकारों को, विशेषकर विश्व भर में मशहूर भारतीय बुनकरों को, अंग्रेज़ों ने हर तरह की मुसीबत में फंसाया।

उच्च ब्रिटिश अधिकारी विलियम बैंटिक ने लिखा कि भारतीय बुनकरों की हड्डियों से यहां की धरती सफेद हो रही है।

ब्रिटिश इतिहासकार एच.एस.विल्सन ने कहा, ''बिना कोई शुल्क चुकाए ब्रिटेन के माल भारत पर लाद दिए गए, और विदेशी कारखानेदारों ने राजनीतिक अन्याय का सहारा लेकर अपने उन प्रतियोगियों को दबाए रखा और अंत में उनका गला घोट दिया जिनसे बराबरी की शर्तो पर वे प्रतियोगिता नहीं कर सकते थे।''

दस्तकारों के चौतरफा शोषण से मुर्शिदाबाद और ढाका जैसे शहर तबाह होने लगे। बेरोज़गार होते दस्तकार कहां जाते। नए उद्योग तो लग नहीं रहे थे। अतः उन्हें कृषि में शरण लेनी पड़ी। खेती पर निर्भर लोगों की संख्या बहुत बढ़ गई। किसान परिवार खाली समय में जो कताई–बुनाई कर लेते थे, उसमें भी बहुत कमी आई।

ब्रिटेन की जिन मिलों का कपड़ा भारत में बेचा जा रहा था, वे पहले अपनी जरूरत की कपास अमरीका से ले रही थी। अतः ये मशीनें अमरीकी कपास की कताई को ध्यान में रखकर बनाई गई थी। बाद में अमरीकी कपास की कमी होने पर ब्रिटेन ने भारत से कपास ले जाना शुरू किया। अपनी मशीनों की जरूरत के अनुसार उन्होंने यहां भी अमरीकी किस्म की कपास को फैलाया। यह कपास भारतीय गांवों में प्रचलित चरखे के अनुकूल नहीं।

भारत की कपास सस्ते दाम पर बाहर जाने लगी व बाहर की मिलों का कपड़ा यहां बिकने लगा। कपड़े के बारे में हमारी आत्मनिर्भरता खत्म हो गई। धुनाई, कताई, बुनाई, रंगाई, छपाई आदि का रोजगार समाप्त हो गया या पहले से बहुत कम

हो गया। इसी तरह अनेक अन्य दस्तकारियों का रोजगार भी नष्ट हुआ।

आज़ादी की लड़ाई के दौरान यह समझ बनी कि दस्तकारियों का यह विनाश भारत की गरीबी का एक मुख्य कारण है। महात्मा गांधी ने गांवों में आत्मनिर्भरता और रोज़गार फिर से लाने के लिए दस्तकारियों को नया जीवन देना चाहा। उनकी इस सोच का प्रतीक बना चरखा।

रोटी के बाद सबसे महत्वपूर्ण जरूरत कपड़ा है। कपड़े की बुनाई गांव में हो सके तो यह गांव की आत्मनिर्भरता का सबसे पहला और सबसे महत्वपूर्ण प्रतीक है। लेकिन गांव के बुनकरों को सूत कहां से मिलेगा? इसके लिए फिर घर–घर में चरखा चलाना चाहिए। जुलाहे तो एक गांव में थोड़े से ही होंगे, पर चरखा हर घर में चल सकता है। अतः हथकरघे से भी बढ़कर गांव की आत्मनिर्भरता और सबके लिए रोजगार का प्रतीक चरखा बना। हाथ से कते और बुने कपड़े को खादी कहा गया, जिसकी मुख्य भूमिका गांवों की आत्मनिर्भरता, आत्मसम्मान और सबके लिए रोजगार में देखी गई।

चरखे, हथकरघे और खादी के बारे में गांधी जी के जो आरम्भिक प्रयोग थे, उसका बहुत रोचक जिक्र हमें उनकी आत्मकथा में मिलता है।

आज जब खादी और स्वदेशी आन्दोलन द्वारा सार्थक भूमिका तलाशने का प्रयास हो रहा है, यह जानना महत्वपूर्ण है कि खादी और चरखे का आरम्भ महात्मा गांधी ने किस संदर्भ में और किस उद्देश्य से किया। अपनी आत्मकथा में इसकी रोचक कहानी बताते हुए उन्होंने लिखा है कि 1915 तक उन्होंने चरखे के दर्शन तो नहीं किए थे पर गरीबी, भूख और बेकारी दूर करने में इसकी भूमिका के बारे में उनकी स्पष्ट राय बन चुकी थी।

दक्षिण अफ्रीका से लौटने पर सत्याग्रह आश्रम की स्थापना के साथ महत्मा गांधी ने यहां हथकरघे लगवाए और आश्रम के सदस्यों ने बुनाई सीखी। वे अपना कुछ कपड़ा स्वयं बुनते और कुछ बाहर के हथकरघा बुनकरों से खरीदते थे। पर ये हथकरघा बुनकर भी विदेशी सूत का उपयोग करते थे, क्योंकि वह अधिक महीन और बढ़िया होता था। आश्रम ने अपने यहां के मिलों की सूत का बुना कपड़ा खरीदने की गारंटी दी तभी बुनकरों ने उन्हें यह मोटा कपड़ा देना आरम्भ कर दिया।

अब समस्या यह थी कि अपनी मिलों से भी सूत नियमित तौर पर कैसे प्राप्त किया जाए, क्योंकि उनका ध्येय तो खुद सूत कात कर कपड़ा बुनना

था। हथकरघों को अच्छा और सही कीमत का सूत नियमित उपलब्ध करवाने में उनकी रूचि नहीं थी। इसलिए कताई के मामलें में आत्मनिर्भर होने के महत्व को और तीक्ष्णता से अनुभव किया गया। गांधी जी लिखते हैं, ''हमने देखा कि जब तक हम हाथ से सूत न कातें, हमारी पराधीनता बनी रहेगी। हमें यह नहीं जान पड़ा कि मिल के एजेन्ट बनकर हम देश–सेवा कर रहे हैं।''

पर आश्चर्य की बात है कि उस समय तक चरखे का प्रचलन बहुत कम हो चुका था और बहुत खोजने पर भी कई महीनों तक गांधी जी को कोई चरखा चलाने वाला नहीं मिला। चरखे की चर्चा बहुत होने के बाद अन्त में गंगाबाई नामक महिला ने चरखे की खोज की जिम्मेवारी अपने ऊपर ली। गांधी जी आगे लिखते हैं, ''गुजरात में खूब भटकने के बाद, गायकवाड़ के बीजापुर में गंगा बहन को चरखा मिला। बहुतेरे कुटुंबों के पास चरखा था और उसे उठा कर उन्होंने टांड पर रख दिया था। पर यदि उनका सूत कोई ले और उन्हें पूनी दी जाए तो वे कातने को तैयार थे।''

अब सवाल था कि पूनियां कहां से ली जाए? कुछ समय तक उन्हें एक मिल से प्राप्त करने की व्यवस्था हो गई। पर ''मिल की पूनियां लेकर सूत कतवाने में मुझे भारी दोष दिखाई दिया। अगर मिल की पूनियां लेते हैं तो फिर सूत लेने में क्या दोष है? हमारे पुरखों के पास मिल की पूनियां कहां थी? वे कैसे पूनियां तैयार करते थे? पूनियां बनाने वाले की तलाश के लिए मैंने गंगा बहन से कहा। उन्होंने इसका जिम्मा लिया। एक धुनिया ढूँढ़ निकाला।''

उसके बाद तो आश्रम में ही चरखे में सुधार किए गए और कईं चरखे और तकुए बनाए गए। जब यह काम खूब चल निकला और चर्चित हुआ तो एक मिल मालिक ने गांधी जी को बातचीत के लिए बुलाया। उसने बताया, ''बंग भंग के समय जो स्वदेशी आन्दोलन चला था उसका लाभ भी कुछ मिल मालिकों ने स्वदेशी माल के नाम पर विदेशी माल बेच कर कमाया था। जब तक स्वदेशी उत्पादन कम होगा तब तक किसी न किसी रूप में विदेशी माल ही बिकेगा। स्वदेशी उत्पादन तेजी से बढ़ाना हो तो नई मिलों की स्थापना अपने देश में करनी होगी।'' इसलिए इस मिल मालिक ने गांधी जी को सलाह दी कि वे अपने स्वदेशी आन्दोलन की दिशा को बदल दें और 'नई मिलें खोलने की तरफ ध्यान दें।'

उत्तर में गांधी जी ने कहा, ''यह तो मैं कर नहीं रहा हूँ, पर चरखे के काम में लगा हूँ।'' मिल मालिक ने पूछा, ''यह क्या चीज़ है? ''गांधी जी ने चरखे की बात सुनाई और आगे कहा, ''इस प्रकार के स्वदेशी में मेरी श्रद्धा है, क्योंकि इसके द्वारा ही हिन्दुस्तान के भूखों मरने वालों, अर्द्ध बेकार स्त्रियों को काम दिया जा सकता है। जो वे कातें उस सूत को बुनवाना और वह खादी लोगों को पहनाना यह मेरी भावना है और मेरा आन्दोलन है। चरखे का आन्दोलन कहां तक सफल होगा, यह तो मैं नहीं जानता। अभी तो सिर्फ इसका आरम्भ काल है पर मुझे पूरा विश्वास है।''

महात्मा गांधी के लिए खादी आन्दोलन और स्वदेशी आन्दोलन का आरम्भ से ही यह संकीर्ण अर्थ नहीं था कि विदेशी कारखाने की जगह देश के कारखाने के माल का प्रचलन हो। यदि यह संकीर्ण अर्थ होता तो वे अपने देश के मिल मालिक की सलाह मान लेते या कम से कम सूत को मिल

से ही प्राप्त करते रहने का प्रयास करते। चरखे और धुनिए को ढूंढ़ने के लिए चक्कर न लगाते रहते। पर उनकी खादी और स्वदेशी के बारे में मूल सोच यही थी कि इसका लाभ गरीब और

अर्द्ध बेकार लोगों तक पहुंचाया जाए जैसा कि उन्होंने मिल मालिकों को बहुत स्पष्ट शब्दों में बताया था।

गांव के गरीब लोगों की सहायता के लिए वे काफी हद तक आत्मनिर्भर रहने वाली एक ऐसी व्यवस्था तलाश रहे थे जिसमें साम्राज्यवाद के हमलों और पूंजीवाद में समय–समय पर आने वाले संकटों से अपने को बचाकर हमारे ग्रामवासी बुनियादी जरूरतों के बारे में आश्वस्त हो सकें। खादी के बारे में उनकी इस गहरी और व्यापक सोच को स्वतंत्र भारत में मान्यता नहीं मिली।

उदाहरण के लिए कागज़ी तौर पर हथकरघा बुनकरों या हैंडलूम क्षेत्र के लिए सरकार ने अनेक सुविधाओं की घोषणा की हुई है, पर सूत के मामले में उन्हें मिलों पर निर्भर बनाकर रखा गया है। मिलों द्वारा कभी हथकरघा बुनकरों को संतोषजनक ढंग से सूत उपलब्ध नहीं कराया गया है, बुनकरों के आर्थिक संकट का यह एक स्थायी कारण बन गया है।

इतना ही नहीं, खेतों में कपास की उन नई किस्मों को सरकार ने प्रोत्साहित किया है जो मिलों में होने वाली कताई के अधिक अनुकूल हैं। इस कारण तो आत्मनिर्भरता का कार्य अब महात्मा गांधी के समय से भी कठिन हो गया है। खेती,

कताई, बुनाई, चरखे और हथकरघे के बीच जो सिलसिला बना हुआ था उसे तोड़ दिया गया है। उसे जोड़ने का कोई प्रयास किए बिना ही हथकरघा बुनकरों के लिए छोटी–मोटी सुविधाओं के वायदे किए जाते हैं। इन्हें भी प्रायः गलत प्रवृति के लोग लूट के ले जाते हैं। इतना ही नहीं, विकेन्द्रीकरण के नाम पर बहुत से लाभ तो पावरलूम क्षेत्र के हथिया लिए हैं, जबकि पावरलूम क्षेत्र का उपयोग अब मिल मालिक अपने माल के उत्पादन के लिए कर रहे हैं। बस, वे अपनी मिल का ठप्पा लगाकर इस माल को बाज़ार में बेच देते हैं।

1980 के दशक में मध्यप्रदेश के छत्तीसगढ़ क्षेत्र की लौह अयस्क खदानों में मशीनीकरण द्वारा हज़ारों खनिकों के रोजगार के लिए खतरा उत्पन्न हुआ। छत्तीसगढ़ माईंस श्रमिक संघ ने इसका विरोध किया और इसके स्थान पर ऐसी अर्ध–मशीनीकरण की तकनीक प्रस्तावित की जिससे खनिकों का रोजगार बच सकता था। मशीनीकरण और महिला मजदूर पर हिर्री में हुए महिला सम्मेलन 1987 के एक दस्तावेज में कहा गया, ''अर्ध–मशीनीकरण की पद्धति में लोहा पत्थर फोड़ने वाला एक भी पुरूष या महिला मजदूर अपने काम से हटता नहीं है। मशीनीकरण का सवाल केवल उत्पादन से नहीं, बल्कि उत्पादन में जुटी हुई श्रमशक्ति से भी जुड़ा हुआ है। विज्ञान और तकनीकी मानव समाज को तरक्की की ओर ले जाने की भूमिका अदा करती है, लेकिन जब वैज्ञानिक जानकारी के उपयोग से बनी बड़ी मशीनें इंसान को बेरोजगार की और धकेलती हैं तब वे प्रगतिशील नहीं रह जाती।''

इस तरह के अनेक उदाहरण हमारे आस–पास बिखरे हुए हैं। वर्तमान परिस्थितियों में भी जनसाधारण की आजीविका से जुड़े ऐसे अनेक सवाल उठते रहते हैं जिनमें महात्मा गांधी के विचार बेहद प्रासंगिक हैं। इन विचारों के आधार पर लोगों की आजीविका को बचाने के प्रयास किए जा सकते हैं।

आज खादी को बढ़ाने के लिए बहुत कुछ किया जा रहा है, फिर भी हमें पूछना चाहिए– कहीं हम खादी के मूल उद्देश्य से भटक तो नहीं गए हैं?

समय–समय पर हथकरघा बुनकरों के संकट के समाचार मिलते हैं। इस संकट की जांच करने पर पता चलता है कि अच्छे सूत की कमी इसका एक मुख्य कारण है। इन्हें मिल के सूत पर क्यों निर्भर रखा गया? यदि लाखों घरों के चरखे से सूत मिलता तो इन्हें इसकी कमी नहीं होती।

घर–घर में सूत कातने का सपना क्यों नहीं पूरा हुआ? इन दिनों भी अमरीकी कपास की खेती को अधिक महत्व दिया गया है। यह कपास मिल की मशीनों में कताई के लिए तो ठीक है, पर गांव के चरखे के लिए नहीं।

दूसरी बात यह है कि गांव में अम्बर चरखा पहुंचाया गया। इसके कुछ पुर्जे बड़े कारखाने से बनकर आते हैं। अतः इस बारे में गांव आत्मनिर्भर नहीं हुआ। फिर स्थानीय देशी किस्म की कपास इसके अनुकूल होगी, यह भी पक्का नहीं है, क्योंकि यह अम्बर चरखा भी अपनी खास किस्म की कपास चाहता है।

इस तरह कपास की खेती, धुनाई, कताई, बुनाई, रंगाई, छपाई को एक ही गांव में आपस में जोड़ कर आत्मनिर्भरता बनाने की जो बात थी, उसे पीछे छोड़ दिया गया है। गांव का बना कपड़ा गांव में ही पहना जाए, वह बात नहीं रही। शहरों में खादी भंडार खुल रहे हैं यह अलग बात है: पर उसमें तो यातायात, कर्मचारियों के वेतन, शहरी भवन का किराया आदि के खर्चे भी जुड़ जाते

हैं। कई बार व्यवस्था ठीक नहीं होती सो अलग। इस तरह खादी महंगी भी हो जाती है।

इसकी जगह मान लीजिए कि गांव के दो सौ घरों ने कपास उगाकर सूत बुनकर गांव के चार जुलाहों को दिया। जुलाहों ने इस सूत से 100 मीटर कपड़ा बुना। इस 100 मीटर कपड़े में से 50 मीटर कपड़ा जुलाहों ने कातने वालों को दे दिया। 20 मीटर रंगाई व छपाई वालों को दे दिया। शेष अपने लिए रख लिया। इस तरह सबको रोजगार मिला, सबकों टिकाऊ पक्का वस्त्र सस्ते में मिला, सबको अपने बनाए वस्त्र को पहनने का सम्मान व आनंद मिला।

यह सोच केवल कपड़े पर लागू नहीं होती है। चमड़े के जूते, चप्पल, पर्स आदि बनाने के काम को गांव में किया जा सकता है। दैनिक जीवन की कितनी ही वस्तुएं हैं जिनका उत्पादन गांव स्तर पर किया जा सकता है। किसी भी गांव के लोग एक सूची बना सकते हैं कि किन वस्तुओं का उत्पादन वे अपने गांव में कर सकते हैं। वे गांव व कस्बे में इस तकनीक से उत्पादन करें कि अधिक से अधिक रोज़गार मिले। किसी का शोषण न हो। सब सहयोग व सहकारिता से उत्पादन करें।

कुछ समय पहले मध्यप्रदेश के महासमंद जिले में अनेक बन्धक मजदूरों की रिहाई हुई तो उनके लिए नए रोजगार का सवाल था। उनमें से अनेक ने कपड़े धोने का साबुन, नहाने का साबुन आदि बनाना सीखा व इसकी बिक्री उन मजदूरों में ही हो गई। इन साबुनों के नाम भी उनकी भावना के अनुकूल रखे गए, जैसे– 'क्रान्ति' व 'मशाल' आदि।

जब गांव में उपलब्ध संसाधनों से बहुत सी ज़रूरतें पूरी होने लगेंगी, तब गांवों में बेरोज़गारी व गरीबी की समस्या बहुत कम हो जाएगी। यही चरखे का संदेश है, चरखा इसी सोच का प्रतीक है। हमारी आज़ादी की लड़ाई में विदेशी लूट के विरोध का प्रतीक बना था चरखा। आज भी गरीबी, बेरोजगारी और शोषण के विरूद्ध लड़ाई में चरखे की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका है।

भारत जन विज्ञान समिति द्वारा प्रकाशित चरखे का संदेश से साभार।

बुनियादी शिक्षा की समीक्षा से उभरे मुद्दे

भागचन्द्र कुमावत

दिनांक 12.10.2006 को विद्या भवन सोसायटी में बी.ई.आर. परियोजना के संदर्भ में श्री अमरजीत सिन्हा के द्वारा की गई समीक्षा के माध्यम से परियोजना के कार्यक्रमों को feed back देने के लिए श्री अमरजीत सिन्हा के साथ एक चर्चा बैठक रखी गई। इस बैठक में अमरजीत सिन्हा, एच.के. दीवान, भाग चन्द्र कुमावत एवं के.आर. शर्मा उपस्थित थे। चर्चा से परियोजना के बारे में निम्नलिखित बिन्दू उभर के सामने आए–

1. श्री अमरजीत सिन्हा ने कहा कि विद्या भवन बेसिक स्कूल के अन्दर काम ठीक हो

रहा है। लेकिन दूसरे विद्यालयों के साथ काम को सही दिशा में आगे बढ़ाने की जरूरत है। इसी तरह IASE के साथ काम को गति नहीं मिल पायी है। विशेषतौर से SIERT, DIET और राजस्थान माध्यमिक शिक्षा बोर्ड के संदर्भ में सरकार के साथ partnership को कैसे आगे बढ़ाई जाए? पर सोचना होगा और इस काम में level of interaction की जरूरत है।

3. निश्चित रूप से इस परियोजना से सीखने की काफी संभावनाएं हैं। लेकिन शैक्षिक अभिकरणों व संस्थाओं से ठोस रूप से लगातार सम्पर्क व संवाद स्थापित करने की जरूरत है। बुनियादी शिक्षा के बारे में ऐसी सामग्री बनानी होगी जिसका कक्षा–कक्ष और विद्यालय की परिस्थितियों में उपयोग किया जा सके और जिसमें बुनियादी शिक्षा के निहितार्थ को समझा जा सके।

4. यदि इस परियोजना को स्पष्ट दिशा व दृष्टि नहीं मिल पाती है और परियोजना में तय किए गए उद्देश्यों को पूरा नहीं किया जाता है तो आगे काफी दिक्कत आ सकती है। हमारे पास एक वर्ष का समय है और इस समय का पूरा उपयोग कर इस दिशा में आगे बढ़ा जा सकता है।

5. आस–पास के विद्यालयों के साथ सकारात्मक सम्बन्ध तो बने है। लेकिन विद्या भवन बेसिक स्कूल में किए जा रहे काम को हम कैसे इन विद्यालयों से जोड़े? इस पर सोचने व काम करने की जरूरत है।

6. उन्होंने आगे कहा कि IASE के सहयोग से किए जाने वाले काम सम्पर्क व संवाद की कमी के चलते काम नहीं हो पाया है। IASE की भूमिका को मजबूत करने की जरूरत है। इस संदर्भ में हम एक बार उदयपुर जिले के कुछ विद्यालयों में अपना ध्यान केन्द्रित कर सकते है।

7. विद्या भवन बेसिक स्कूल के शिक्षकों की अकादमिक क्षमताओं के संवर्द्धन व सशक्तीकरण करने की जरूरत है। उनके केवल किसी कार्यशाला या संगोष्ठी में चले जाने या भाग लेने से काम नहीं चलेगा। उन्हें निश्चित अन्तराल में अकादमिक विषयों का प्रशिक्षण देना पडेगा। ताकि वे अपने काम को ठीक से सके।

8. विश्वमंगलम् अनेरा में महिलाओं के पी. टी.सी. (Primary Teachers Course) पाठ्यक्रम में बुनियादी शिक्षा की मूल बातों को शामिल किया गया है। वहां सबको खादी पहनना जरूरी है। जीवनोपयोगी अथवा जीवन की सार्थक शिक्षा की दृष्टि से इसमें भाषा शिक्षण व स्वास्थ्य संरक्षण को भी जोड़ा जाना चाहिए। इसे देखते हुए लम्बी अवधि के लिए नया पाठ्यक्रम बनाने की जरूरत है।

9. विद्या भवन बेसिक स्कूल को academic support की जरूरत है जो अभी तक नहीं हुआ है। काम को आगे बढ़ाने की दृष्टि से स्कूल की leadership को बढ़ाने

की जरूरत है।

10. विश्वमंगलम् अनेरा में आवासीय व्यवस्था होने से विद्यार्थियों को वहां समूह जीवन का प्रशिक्षण प्राप्त होता है। किन्तु यहां विद्यालय गैर आवासीय होने से एक सीमा के अन्दर रह कर काम करना पड़ता है। इसकी वज़ह से बच्चों को समूह जीवन की सारी बातों का प्रशिक्षण नहीं मिल पाता।

11. सरकार के साथ काम करने के लिए हमारी पूरी तैयारी नहीं है। अतः सबसे पहले इसकी तैयारी की जरूरत है। तैयार होने पर शुरू में हम उदयपुर के एक ही जिले में काम कर सकते है।

12. IASE के द्वारा बुनियादी शिक्षा के फैलाव के लिए किए जाने वाले शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम में केवल भाषण बाजी नहीं होनी चाहिए। इसके स्थान पर शिक्षकों का बुनियादी शिक्षा की मुख्य व्यवहारिक गतिविधियों का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

13. NCERT की तरफ से SIERT पर जीवन उपयोगी शिक्षा के लिए दबाव बनाने की जरूरत है।

SIERT पर एस.यू.पी.डब्ल्यू. और कार्यानुभव के संदर्भ में दबाव बनाया जा सकता है।

14. विद्या भवन बेसिक स्कूल के भौतिक संसाधनों में तो काफी इज़ाफा हुआ है किन्तु बुनियादी शिक्षा की learning कम हो रही है। इस दिशा में और सामग्री विकसित (material development) करने की जरूरत है।

15. विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र जयपुर दो–तीन जिलों के सरकारी विद्यालयों में learning guarantee Programme के संदर्भ में काम कर रहा है। उसे देखते हुए बुनियादी शिक्षा के बारे में सरकार के साथ विशेषतौर से राज्य शिक्षा सचिव के साथ बातचीत की जा सकती है।

16. चर्चा में यह सुझाव दिया गया कि अगले छः माह में बुनियादी शिक्षा की सामग्री तैयार करने के संदर्भ में एक कार्यशाला की जाए। विद्या भवन बेसिक स्कूल को उल्लेखित सब चीज़ों की जिम्मेदारी होगी।

17. अमरजीत सिन्हा ने चर्चा में बताया कि मसूरी (उतरांचल) में सिद्ध (SIDH) नाम की एक संस्था है इसके तहत में 15–16 स्कूल चलते हैं। वहां बच्चों को शिक्षा में स्थानीय पर्यावरण से सीखने के काफी मौके दिए जाते हैं। यहां जाकर इन विद्यालयों की गतिविधियों देख कर कुछ सीखा जा सकता है।

18. एच.के. दीवान ने अपने अनुभवों को बताते हुए मत व्यक्त किया कि वर्तमान समाज बुनियादी और उत्तर बुनियादी शिक्षा के विद्यालयों को स्वीकार करने की भावना नहीं रखता है और न ही उन्हें मान्यता देने के लिए तैयार है। बुनियादी शिक्षा के इस मुद्दे से हम जूझ रहे हैं। यह हमारी कमी रही है।

19. शिक्षा सामाजिक रूपान्तरण का एक सशक्त साधन है। परियोजना की शुरूआत में हमारे द्वारा व्यापक रूप से ठोस प्रयास शुरू किए गए थे। इस प्रयास के तहत स्कूल का

समय बढ़ाया गया। शिक्षकों को पढ़ने के लिए एक घण्टे का समय दिया गया। लेकिन इसके बावजूद भी उनकी सीखने की क्षमता का विकास धीरे–धीरे हो रहा है। दूसरी और प्रो. रमाकान्त अग्निहोत्री के द्वारा भाषा सीखने–सिखाने के संदर्भ में शिक्षकों की काफी training हुई है। भाषा में लिपि की बात हुई है। स्थानीय भाषा की बात हुई। शिक्षक जो स्कूल में आते है वे एन्टी मैकाले की बात करते हैं। केवल गांधी जी की प्रशंसा करने से काम नहीं चलेगा। उससे और आगे बढ़ना पड़ेगा और गहराई में उतरना पड़ेगा। विद्यालय की सीमाएं है, किन्तु ज्ञान और काम के सम्बन्ध को स्थापित करने के लिए हमें और गहराई में उतरना पड़ेगा जो कि असंभव नहीं है। इस संदर्भ में 22–23 सितम्बर 05 की कार्यशाला और 11–12 मार्च 06 के सेमीनार के बाद हमने सोचना शुरू किया है। इस प्ररिप्रेक्ष्य में भी हमने काफी interaction किया है।

20. श्री दीवान ने राय व्यक्त की कि बाल केन्द्रित शिक्षा को बुनियादी शिक्षा में सम्मिलित किया जा सकता है। अंग्रेज़ी की पाठ्यपुस्तक के बिना बच्चे अन्य चीजों से अंग्रेजी सीख सकते हैं। अन्य गतिविधियों की worksheets तैयार करके बच्चों के लिए एक पुस्तकालय बनाया जा सकता है। इसके लिए राज्य सरकार के साथ हम कोशिश कर रहे हैं। इस संदर्भ में राज्य शिक्षा बोर्ड के साथ भी बातचीत की जा सकती है।

21. एच.के.दीवान ने कहा कि मसूरी (उतरांचल) में स्थित सिद्ध संस्था जो बुनियादी शिक्षा के संदर्भ में जो काम कर रही है, उसे वहां जाकर देखा जा सकता है। उसके संस्थापक श्री पवन कुमार गुप्ता को यहां बुलाकर उनसे बात की जा सकती है। इस संदर्भ में दिसम्बर 06 में विद्या भवन बुनियादी शिक्षा संदर्भ केन्द्र के द्वारा उदयपुर में एक कार्यशाला की जा सकती है जिसमें सिद्ध संस्था के श्री पवन कुमार गुप्ता को बुलाया जा सकता है।

22. दिसम्बर 06 में कक्षा IX व X के अध्यापकों के लिए विज्ञान पर एक कार्यशाला रखी जा सकती है। इस कार्यशाला को आयोजित करने की जिम्मेदारी श्री नगेन्द्र नागपाल व श्री के.आर. शर्मा को दी जा सकती है।

23. हमने बुनियादी शिक्षा के संदर्भ में काम तो काफी किया है किन्तु वह visible नहीं है।

24. श्री अमरजीत सिन्हा ने समीक्षा में अपनी राय प्रकट करते हुए कहा कि विद्या भवन बेसिक स्कूल के शिक्षकों में उत्प्रेरणा (motivation) तो काफी है। लेकिन ऐसा क्या करें कि उनमें competency आ जाए।

25. यह सोचने की जरूरत है आने वाले दिनों में कि भाषा, गणित व विज्ञान आदि पर विद्या भवन बेसिक स्कूल के शिक्षकों की 4 दिन की प्रशिक्षण की कार्यशाला करेंगे। इस संदर्भ में कक्षा में क्या कर सकते हैं? इस पर अभी तक शिक्षकों से बात नहीं की गई है। इस पर हम काम करेंगे।

26. विद्या भवन बेसिक स्कूल के शिक्षकों में आत्मविश्वास की कमी है। वह कैसे आएगा? इस पर विचार करने की जरूरत है। कक्षा के काम के लिए खुद शिक्षकों को मान्यता देनी पड़ेगी। कक्षा के अन्दर और बाहर क्या किया जा सकता है इस पर शिक्षकों को विचार करना होगा।

27. शिक्षक, पाठ्यपुस्तकों के अलावा अन्य सीखने–सिखाने की सामग्री तैयार करें और उसका कक्षा में उपयोग करें तो उसका शिक्षण में फर्क पड़ेगा। औपचारिक पाठ्यपुस्तक के अलावा यह सीखने की सामग्री तैयार करने की एक लम्बी प्रक्रिया है।

28. आचार्य राममूर्ति का उदाहरण देते हुए कहा कि विद्यालय में बच्चों को योगदान करने के अवसर होने चाहिए। यह बात सबसे महत्वपूर्ण है।

29. दिसम्बर 06 में की जानेवाली कार्यशाला की अभी से तैयारी की जानी चाहिए। इसके लिए अभी से एक नोट बनाना कि यह कार्यशाला क्यों कर रहे हैं? इस कार्यशाला में 'संधान' संस्थान के लोगों को बुलाया जा सकता हैं।

30. श्री अमरजीत सिन्हा ने कहा कि NCERT से फिल्म मंगवा सकते हैं। जिसमें शिक्षकों के फर्क तरह के काम को देख सकते है और उनको समझ सकते हैं। इसी तरह उन्होंने आगे कहा कि बिहार राज्य से निकलने वाली 'उजाला' पत्रिका को पढ़ सकते हैं। इसी परिप्रेक्ष्य में नेत्रहाट स्कूल दिल्ली को देख सकते हैं। इसी तरह छत्तीसगढ़ राज्य में स्थित जगदलपूर, रामकृष्ण मिशन का हाईस्कूल देख सकते है।

33. श्री अमरजीत सिन्हा ने कहा कि पटना में गणित के अच्छे शिक्षक हैं। उनको उदयपुर में कार्यशाला में बुलाया जा सकता है। इसी तरह पटना में श्री विजय प्रकाश का experimental learning pattern स्कूल है, उसको देखा जा सकता है। इसी तरह पटना में अभयानन्द का different perspective of curriculum है उसका अध्ययन किया जा सकता है। उन्होंने यह भी कहा कि जो शिक्षाशास्त्र स्वयं के द्वारा विकसित होता है, वह सबसे बढ़िया होता है।

पुस्तक समीक्षा

बनाने पर एक किताब

के. आर. शर्मा

हाल ही में अंग्रेजी में लिखी गई मेकिंग थिंग्स का हिंदी अनुवाद कुछ–कुछ बनाना एकलव्य ने प्रकाशित किया है। इस किताब को अंग्रेजी में एन. सायर वाइज़मैन ने रचा है। इस पुस्तक में 100 से भी ज्यादा चीज़ें बनाने के आसान से तरीके बताए गए हैं। दरअसल इस किताब का ले–आउट कुछ इस तरह से किया गया है कि किताब को उपयोग करने वाले को न तो बोरियत महसूस होगी और न ही उपयोग करने में कोई कठिनाई या भ्रम। पाठ्यपुस्तकीय मानसिकता से कोसों दूर यह पुस्तक हर चीज के बनाने को लेकर स्पष्ट और सटीक चित्रण प्रस्तुत करती है। चीज़ों को बनाने में जो सामग्री का उपयोग होना है वो है धागा, आलू, टीन के ढक्कन, कागज़, पुरानी पत्रिकाएं, फेविकोल, प्लास्टिक स्ट्रा, गत्ता, गिली मिट्टी, कील, हथौड़ी, कैंची, आदि जो कि अपने आसपास से आसानी से बटोरी जा सकती है।

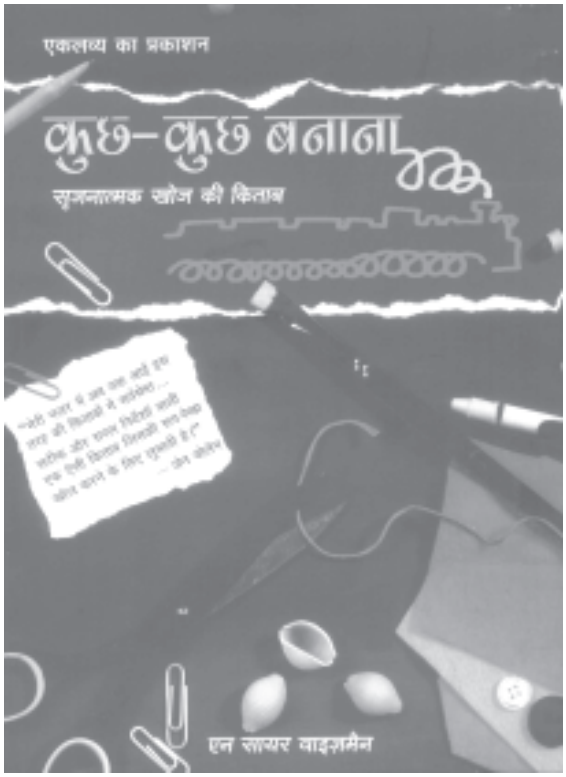

पुस्तक के माध्यम से लेखिका आम लोगों में चाहे वे बच्चे हों या वयस्क, उनमें हाथों के कौशलों का विकास करना चाहती हैं। वह चाहती हैं कि लोग स्वावलंबी बनें। एक जगह पर लिखती हैं कि मछली मारकर देने के बजाए मछली मारना सिखाया जाए। यदि मछली मारकर दी जाएगी तो एक दिन तो कोई अपना पेट भर सकेगा। और मछली मारना सिखा दिया जाए तो वो इस कौशल की मदद से आत्मनिर्भर बन सकेगा।

किताब के प्रारंभ में ही लेखिका बड़ों को संबोधित करके कहती है कि'' प्रिय नए रचनाकारों और देर से सीखना शुरू करने वालो''। यह चिट्ठी बड़ों को या बनाना सीखने वालों का हौसला अफजाई करती है साथ ही कहती है कि इंसान में काफी कुशलताएं होती है। साथ ही सवाल पूछने के लिए प्रेरित भी करती है। यह किताब कुछ करने के लिए इजाजत देती है मसलन ''कुछ नया करना या आज़माना ठीक है। गलतियां करने में कोई हर्ज नहीं। उनसे तुम बहुत कुछ सीखोगे। खतरा मोल लेना ठीक है। प्रचलित तरीकों पर प्रश्न उठाना ठीक है। सृजन के दौरान चीजें अक्सर अस्त–व्यस्त

होती है।''

यह किताब अंग्रेजी में सन 1973 में पहली बार प्रकाशित किया था। अमेरिका में इस किताब को अपनी कक्षा की बाइबिल मानते हैं। लेखिका कहती है कि उनके पास बच्चों की चिट्ठियां आती हैं मेकिंग थिंग्स को हिदी में अनुवाद करके भारत में उपलब्ध कराने के लिए अरविंद गुप्ता ने लेखिका के साथ ई–मेल पर काफी चर्चाएं की और अंततः यह हिंदी संस्करण प्रकाशित हो पाया। वाइज़मेन कहती हैं कि इस पुस्तक का विचार उनको उन प्रगतिशील स्कूलों से मिला जहां उनने करके सीखो पद्धति से शिक्षण पाया। वे यह भी कहती हैं कि उनके माता–पिता ने भी उनकी सृजनशीलता को बढ़ावा देने में कोई कसर बाकी नहीं रखी।

इस किताब के प्रारंभ में एक खूबसूरत दंतकथा दी गई है जो कि आज की शिक्षा व्यवस्था पर करारा चोट करती है। दरअसल हमारी शिक्षा व्यवस्था में बच्चों की काबिलियतों को पहचानने का माद्दा नहीं है। इस दंतकथा में बताया गया है कि हमारे शिक्षा के मंदिर विद्यार्थियों की उन क्षमताओं को तो पहचान ही नहीं पाते जो उनमें मौजूद हैं। उनकी रूचि की बातों को नज़रदांज कर दिया जाता है। और स्कूल उन कौशलों का विकास करना चाहता है जो उनके बस में नहीं होता। देखिए एक बानगी–

जंगल के सभी जानवरों ने एक बैठक बुलाई। जानवर अपने लगातार जटिल होते जा रहे समाज के बारे में चिंतित थे। और इसका कोई उचित हल खोजना चाहते थे। बैठक में यह निर्णय लिया गया कि एक स्कूल शुरू किया जाए।

बत्तख ने तैरने मे अपने शिक्षक को भी पछाड़ दिया। वह उड़ने में काफी माहिर थी। लेकिन वह दौड़ में कमज़ोर थी। इसलिए स्कूल की पढ़ाई के बाद वह दौड़ने के अभ्यास के लिए रुकती थी। उसको तैराकी छोड़नी पड़ी ताकि वह दौड़ने का अभ्यास कर सके। दौड़ने के चक्कर में उसके पैरों में घाव हो गए। नतीजतन वो तैरने में भी अपने आपको असमर्थ पाती थी। ऐसा और भी जानवरों के साथ हुआ।

चील स्कूल के लिए सबसे बड़ी चुनौती साबित हुई। उसने सभी कानून–कायदों को ताक में रख दिया। उसने पेड़ों पर चढ़ने की कुशलता में सारे स्कूल को मात दे दी। लेकिन पेड़ पर चढ़ने के लिए उसने स्कूल का नहीं, बल्कि खुद का तरीका अपनाया।

बिल खोदने वाला बिलखोदा स्कूल नहीं गया। स्कूल के बाहर रहते हुए उसने अपने ऊपर लगे शिक्षा के टैक्स का जोरदार विरोध किया क्योंकि स्कूल में खुदाई का विषय नहीं था। उसने अपने बच्चों को मशहूर खुदाईकर्ता बिज्जू का शागिर्द बना दिया। बाद में उन बच्चों ने सुरंग खोदने वाले सुअरों से प्रशिक्षण लिया। अंत में उनने वैकल्पिक शिक्षा के लिए प्राइव्हेट स्कूल प्रारंभ किया।

स्कूल में जो पाठ्यक्रम तैयार किया गया उसमें दौड़ना, चढ़ना, तैरना, और उड़न जैसी कुशलताएं शामिल की गई। दरअसल ये क्षमताएं उन जानवरों के मूलभूत स्वभाव में थी। इस कारण से सभी जानवर छात्रों को इन विषयों को पढ़ना जरूरी था। लेकिन जो भी उनको पढ़ाया गया वो सब कुछ ऐसा था जिससे कि उनकी नैसर्गिक क्षमताओं का ह्रास होता चला गया।

कुल मिलाकर यह किताब स्कूलों में या कहीं और सीखने के स्थानों पर रखी जाने योग्य है। ऐसी किताब घर में उन बच्चों और युवाओं के हाथों में सौंप देनी चाहिए जो कि कुछ न कुछ करना चाहते हैं।

इस किताब की प्रति विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र, उदयपुर पिटारा से प्राप्त की जा सकती है।

खुद करो और सीखो

विद्या भवन बुनियादी शिक्षा संदर्भ केन्द्र, रामगिरि द्वारा प्रकाशित कार्य पुस्तकें

अक्सर समाज में यह चर्चा होती रहती है कि बालकों को पढ़ाई के साथ–साथ हाथ से काम करना सिखाया जाना चाहिए जिससे उनमें हाथ से काम करने की आदत बने, समूह में काम कर परस्पर सहयोग करना सीखें। और पढ़ाई के साथ कुछ हुनर सीखकर उसे स्वरोजगार के रूप में अपना सकें। लेकिन बालकों को इस प्रकार की सामग्री एक साथ नहीं मिलती जिसे पढ़कर वे स्वयं अपने हाथों से काम करना सीख सकें या अपनी रुचि के क्षेत्र की बारीकियों को समझकर उसमें कौशल विकसित कर सकें।

हाल ही में विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केंद्र द्वारा बुनियादी शिक्षा के तहत तीन कार्यपुस्तकों का प्रकाशन किया गया है। ये तीनों ही कार्यपुस्तकें बुनियादी विद्यालय रामगिरि में चलाए जा रहे उद्योग की शिक्षा पर आधारित हैं।

कार्य पुस्तकों का उद्देश्य

1. आत्म–विश्वासपूर्ण स्वावलम्बी जीवन की शिक्षा।
2. व्यवसायिक गतिविधियों के द्वारा मन, मस्तिष्क व हाथ के कार्य का समन्वय करना।
3. स्वरोजगार के लिये तैयार करना।
4. श्रम के प्रति निष्ठा।
5. सहयोग व सहकारिता के गुणों का विकास।

खाद्य प्रसंस्करण
(Food Processing)

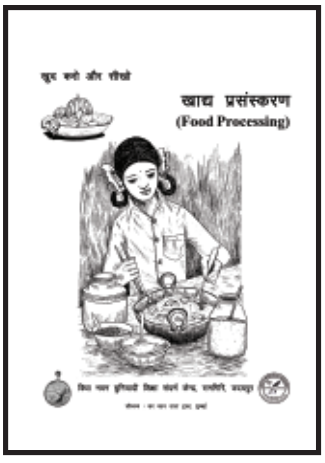

इस पुस्तक में खाद्य प्रसंस्करण से संबंधित सरलतम विधियों को प्रस्तुत किया गया है जिसे पढ़कर आप अपनी रुचि की सामग्री बनाना सीख सकते हैं और आवश्यकता पड़ने पर उसे रोजगार के रूप में भी अपना सकते हैं। इसमें अलग–अलग खाद्य पदार्थों को कैसे संरक्षित रखा जा सकता है इसके गुर सिखाने की कोशिश की गई है।

सुथारी
(Carpentry)

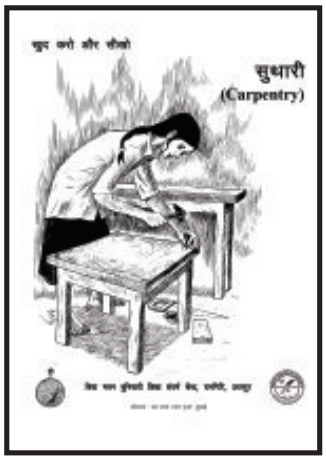

इस कार्यपुस्तक की रचना इस तरह से की गई है कि सुथारी कार्य को एक बालक और बड़ा भी सीख सके। आज के समय की मांग व आवश्यकता को दृष्टिगत रखते हुए सुथारी में काम आने वाले औजारों की जानकारी और उनके उपयोग पर सरलतम तरीके से प्रकाश डाला है। साथ ही लकड़ी को पहचानना, रन्दा लगाना, पैंट करना व दो लकड़ियों में जोड़ लगाने जैसे कौशलों के विकास पर जोर दिया है।

कार्यपुस्तक के माध्यम से अनेक सुंदर व रोजमर्रा के जीवन में काम आने वाले छोटी–मोटी लकड़ी की चीज़ों को बना सकेंगे। यदि कोई चाहे तो फर्नीचर की मरम्मत का कार्य सीखकर अपनी तथा समाज की आवश्यकता को पूरा कर इस विधा को रोजगार के रूप में भी अपनाया जा सकता है।

सिलाई
(Tailoring)

इस कार्यपुस्तक में सिलाई जैसे आवश्यक कार्य के बारे में बारीकी से बताया गया है। इसमें मशीन के पुर्जों की जानकारी के साथ मशीन को ठीक करना, कटिंग व सिलाई करते समय ध्यान रखने योग्य हर छोटी से छोटी बात को समझाया गया है। साथ ही साथ विभिन्न चरणों में कपड़े की कटिंग व सिलाई के तरीकों को सरल ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इस तरह का प्रयास किया गया है कि बच्चे और

बड़े इस पुस्तक में दी गई विधियों का अध्ययन करके सिलाई कर सकें। और आवश्यकता पड़ने पर सिलाई को रोजगार का साधन भी बनाया जा सकता है।

विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केंद्र, उदयपुर की अनूठी पेशकश

पिटारा

बच्चों, अभिभवाकों, शिक्षकों और उन सब पढ़ने में दिलचस्पी रखने वालों के लिए शिक्षा पर उम्दा साहित्य

पिटारा में आप प्राप्त कर सकते हैं–

- विज्ञान, गणित, भाषा, सामाजिक अध्ययन पर गतिविधि आधारित पुस्तकें, चार्टस आदि।
- शिक्षा पर बेहतर साहित्य।
- कहानी, कविताओं पर आधारित किताबें।
- प्रयोगों और मॉडल बनाने के लिए श्रृंखलाबध्द किताबें।

यदि आप इस तरह के साहित्य की तलाश कर रहे हों तो एक बार पिटारा साहित्य जरूर देखें।

संपर्क

विद्या भवन शिक्षा संदर्भ केन्द्र
डा. मोहन सिंह मेहता मार्ग, फतहपुरा
वि.भ. सोसायटी परिसर
उदयपुर(राज0)
फोन: 0294–2451497

ध्वद्या भवन बुनियादी शिक्षा संदर्भ केन्द्र रामगिरि, उदयपुर द्वारा बुनियादी शिक्षा के लोकव्यापीकरण के लिए प्रकाशित तथा प्रसारित।